# आधुनिक भारत का इतिहास

# राष्ट्रवाद

## ( खंड-3 )

-मणिकांत सिंह

1. स्वराज दल का मुख्य उद्देश्य था–

(a) असहयोग को काउन्सिलों तक पहुँचाना

(b) पूर्ण स्वराज्य

(c) स्वशासन ( होमरूल )

(d) हिंसात्मक साधनों से अंग्रेजी शासन का विनाश

2. असहयोग तथा खिलाफत से संबंधित निम्नलिखित घटनाओं को बढ़ते हुए कालक्रम में सझाईए: -

1. खिलाफत का प्रस्ताव – 1920
2. गांधी के द्वारा एक वर्ष में स्वराज का प्रस्ताव – 1921
3. कलकत्ता का विशेष अधिवेशन – सितम्बर, 1920
4. गांधी की गिरफ्तारी — 1922

(a) 1, 2, 3, 4 (b) 2, 1, 3, 4

(c) 1, 3, 2, 4 (d) 1, 2, 4, 3

3. नेहरू रिपोर्ट में निम्नलिखित में क्या प्रावधान थे: –

1. मौलिक अधिकार
2. पृथक निर्वाचन
3. भारतीयों के द्वारा निर्वाचित वायसराय
4. सार्वत्रिक वयस्क मताधिकार

(a) केवल 1
(b) 1, 2, 4
(c) 1, 4
(d) 1, 3, 4

4. **कथन ( A ):-** साइमन कमीशन में सात सदस्य श्वेत लिए गए थे।

**कारण ( R ):-** यह कमीशन ब्रिटिश पार्लियामेंट के सदस्यों से लिया गया था जहाँ कोई भारतीय सदस्य नहीं था।

(a) A और R दोनों सत्य हैं और R, A का सही स्पष्टीकरण है।

(b) A और R दोनों सत्य हैं परंतु R, A का सही स्पष्टीकरण नहीं है।

(c) A सत्य है लेकिन R असत्य है।

(d) A असत्य है लेकिन R सत्य है।

5. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का लाहौर अधिवेशन (1929) इतिहास में इसलिए बहुत प्रसिद्ध है, क्योंकि-

1. कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य की मांग का एक संकल्प पारित किया।
2. इस अधिवेशन में उग्रवादियों एवं उदारवादियों के बीच झगड़े को सुलझा लिया गया।
3. इस अधिवेशन में दो राष्ट्रों की मांग के सिद्धांत को अस्वीकार करते हुए एक संकल्प पारित किया गया।

उपर्युक्त में से कौन-सा/से कथन सही है/हैं-

(a) केवल 1
(b) 2 और 3
(c) 1 और 3
(d) उपर्युक्त में से कोई नहीं

# आधुनिक भारत

## ( खंड-3 )

## भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन ( 1920-29 )

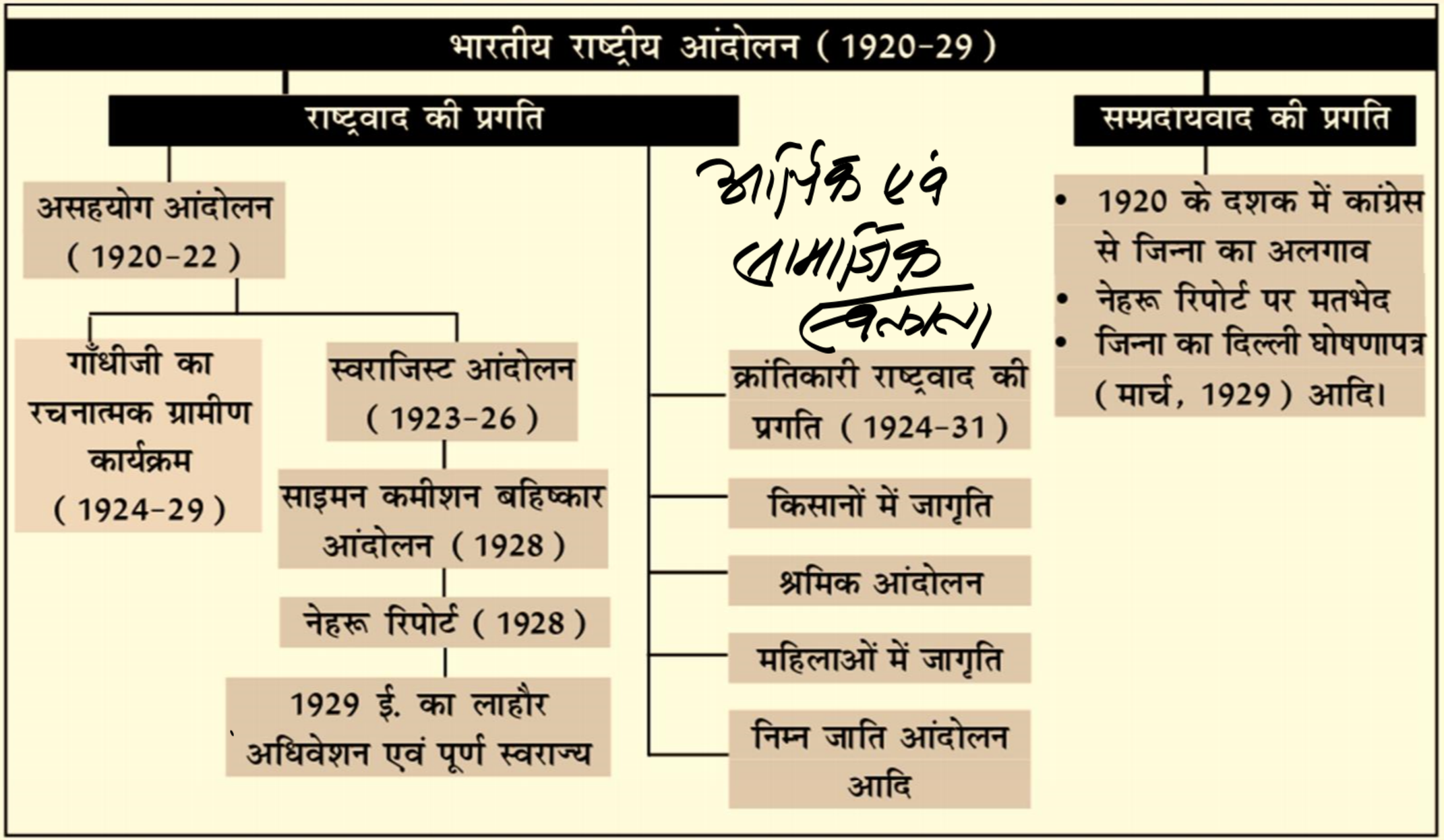
भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन ( 1920-29 )
राष्ट्रवाद की प्रगति
असहयोग आंदोलन ( 1920-22 )
गाँधीजी का रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम ( 1924-29 )
स्वराजिस्ट आंदोलन ( 1923-26 )
साइमन कमीशन बहिष्कार आंदोलन ( 1928 )
नेहरू रिपोर्ट ( 1928 )
1929 ई. का लाहौर अधिवेशन एवं पूर्ण स्वराज्य
आर्थिक एवं सामाजिक
क्रांतिकारी राष्ट्रवाद की प्रगति ( 1924-31 )
किसानों में जागृति
श्रमिक आंदोलन
महिलाओं में जागृति
निम्न जाति आंदोलन आदि
सम्प्रदायवाद की प्रगति
• 1920 के दशक में कांग्रेस से जिन्ना का अलगाव
• नेहरू रिपोर्ट पर मतभेद
• जिन्ना का दिल्ली घोषणापत्र ( मार्च, 1929 ) आदि।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन (1920-29)
राष्ट्रवाद की प्रगति
असहयोग आन्दोलन (1920-22)
गांधीजी का रचनात्मक कार्यक्रम (1922-29)
स्वराजिस्ट आन्दोलन (1923-26)
साइमन कमीशन बहिष्कार आन्दोलन (1928)
नेहरू रिपोर्ट (1928)
लाहौर 1929 प्रस्ताव (पूर्ण स्वराज)
1920 के दशक में राष्ट्रवाद के अर्थ का विस्तार
क्रांतिकारी राष्ट्रवाद
महिलाओं निम्नजाति में जागृति आन्दोलन
किसानों श्रमिक में जागृति आन्दोलन
साम्प्रदायवाद की प्रगति
1920 के दशक में जिन्ना में आए बदलाव
नेहरू रिपोर्ट (1928)
जिन्ना की चौदह सूत्री (मार्च 1929)

# असहयोग आंदोलन ( 1920 ई. )

- 1920-21 ई. में असहयोग आंदोलन के साथ ही भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन ने जन आंदोलन के दौर में प्रवेश किया। असहयोग आंदोलन, जो आवश्यक रूप से खिलाफत मुद्दे के साथ संबद्ध था, में उस अहिंसात्मक संघर्ष की रणनीति को पहली बार राष्ट्रीय स्तर पर अपनाया गया जिसे आगे कांग्रेस द्वारा विभिन्न आंदोलनों के प्रमुख अस्त्र के रूप में उपयोग किया जाना था। राष्ट्रीय आंदोलन में पहली बार कांग्रेस एक ऐसे आंदोलन के समर्थन में खड़ी थी जिसका स्पष्ट उद्देश्य ब्रिटिश सरकार के किसी भी दमनात्मक कार्य में असहयोग करना था।

(9) उन परिस्थितियों की व्याख्या कीजिए जिनके कारण गांधीजी सहयोगी से असहयोगी बन गए।

❑ **कारण :-**

1. **रॉलेट एक्ट (1919)-** प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् जनता को उम्मीद थी कि ब्रिटिश सरकार उनके हितों की रक्षा के लिये कुछ करेगी, परन्तु सरकार ने देश में मार्च, 1919 में रॉलेट एक्ट के नाम से नया कानून लागू कर दिया जिसका उद्देश्य युद्धकालीन प्रतिबंधों को स्थायी बनाना था। इस अधिनियम ने सरकार को किसी भी व्यक्ति को बिना मुकदमा चलाए कैद में रखने का अधिकार दिया था।

2. **जलियाँवाला बाग नरसंहार-** रॉलेट एक्ट के विरोध के दौरान हुए जलियाँवाला बाग नरसंहार ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद की बर्बरता को और उजागर कर दिया। दरअसल 13 अप्रैल, 1919 को वैशाखी के दिन पंजाब में अपने जनप्रिय नेताओं डॉ. सैफुद्दीन किचलू तथा डॉ. सत्यपाल की गिरफ्तारी के खिलाफ विरोध प्रकट करने के लिये जलियाँवाला बाग में एक भीड़ इकट्ठी हुई थी। इसी भीड़ पर अमृतसर के कमांडर जनरल डायर ने बिना चेतावनी दिए, चौतरफा गोली चलाने का आदेश दे दिया जिसमें हजारों लोग मारे गए।

3. **हंटर समिति की रिपोर्ट–** जलियाँवाला बाग हत्याकांड पर सरकार की हंटर समिति की रिपोर्ट ने भी कॉन्ग्रेसियों में गहरा असंतोष भर दिया क्योंकि इसमें जलियाँवाला बाग हत्याकांड जैसे बर्बरतापूर्ण कार्य को सही ठहराया गया था तथा जनरल डायर को अपराधमुक्त कर दिया गया था।

4. **खिलाफत का मुद्दा–** गाँधीजी को 1920 ई. में खिलाफत के रूप में एक नया मुद्दा मिल गया। खिलाफत आंदोलन भारत में मुख्यतः मुसलमानों द्वारा चलाया गया राजनीतिक-धार्मिक आंदोलन था, जिसका मुख्य उद्देश्य तुर्की के खलीफा के पद की पुनर्स्थापना करने के लिये अंग्रेजों पर दबाव बनाना था।

- दरअसल, प्रथम विश्व युद्ध में मुसलमानों का सहयोग पाने के लिए ब्रिटिश सरकार ने उनसे वादा किया था कि ब्रिटेन तुर्की की अखंडता तथा सार्वभौमिकता बनाए रखेगा। परन्तु ब्रिटेन ने युद्ध की समाप्ति पर तुर्की के साथ कठोर व्यवहार किया।

## ➢ खिलाफत आंदोलन के कारण :-

- 1912-13 ई. के बाल्कन युद्ध के बाद 1913 ई. में आयोजित लंदन सम्मेलन में यूरोपीय शक्तियों द्वारा तुर्की के विरुद्ध विरोध की नीति को अपनाया गया। इस मुद्दे को लेकर मुस्लिम लीग में नाराज़गी थी।
- प्रथम विश्वयुद्ध के बाद पेरिस शांति सम्मेलन, 1919 में तुर्की को कठोर दंड देने का निर्णय लिया गया। इसमें खलीफा के पद को समाप्त किये जाने का प्रावधान भी शामिल था। चूँकि तुर्की का खलीफा पूरे विश्व में सुन्नी मुसलमानों का धर्मगुरू माना जाता था। अतः ऐसे व्यवहार से मुसलमानों का क्षुब्ध होना स्वाभाविक ही था।
- उसी तरह, मुस्लिम लीग की निरंतर मांग के बावजूद अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी पर सरकार नियंत्रण कम करने के लिए राजी नहीं थी। सरकार के इस फैसले से भी लीग में असंतोष था।

## ➢ गाँधी द्वारा खिलाफत आंदोलन का समर्थन करने के कारण :-

- गाँधीजी ने खिलाफत आंदोलन के प्रति सहानुभूति व्यक्त की तथा उसे भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में हिंदू-मुस्लिम एकता स्थापित करने का एक ऐसा अवसर माना जो कि आगे सौ वर्षों तक नहीं प्राप्त होना था। इसके अतिरिक्त गाँधीजी द्वारा खिलाफत आंदोलन का समर्थन करने के निम्नलिखित कारण थे-
- वह ब्रिटिश की 'फूट डालो और राज करो' की नीति का जवाब 'जोड़ो और विरोध करो' की नीति से देना चाहते थे।
- तुर्की के सैनिक कमांडर मुस्तफा कमाल पाशा ने प्रथम विश्वयुद्ध में यूरोपीय शक्तियों को चुनौती दी, लेकिन मित्र राष्ट्रों ने प्रथम विश्वयुद्ध जीतने के पश्चात् स्वयं को अपराजेय घोषित कर दिया था। अतः गाँधीजी ने खिलाफत का मुद्दा उठाकर एक तरह से स्वयं को साम्राज्यवाद विरोधी मोर्चे से जोड़ दिया।

## ➤ घटनाक्रम:-

- राष्ट्रवादियों के प्रभाव में मुस्लिम लीग ने 1920 में असहयोग का प्रस्ताव पारित किया। तत्पश्चात् गाँधी ने भी कांग्रेस पर पंजाब ज्यादती, खिलाफत ज्यादती तथा स्वराज के मुद्दे पर एक आखिल भारतीय आंदोलन शुरू करने का दबाव डाला। किंतु कुछ कांग्रेसी नेता गाँधी के इस प्रस्ताव का विरोध कर रहे थे, किंतु गाँधी ने 1 अगस्त, 1920 को असहयोग आंदोलन आरंभ किया। सितम्बर, 1920 में कलकत्ता के विशेष अधिवेशन में इस प्रस्ताव को स्वीकृति मिली। फिर दिसंबर, 1920 में नागपुर के कांग्रेस अधिवेशन में इसे हरी झंडी मिल गयी।

## ❑ असहयोग आन्दोलन के कार्यक्रम :-

- इस आन्दोलन में दो प्रकार के कार्यक्रम रखे गए- नकारात्मक तथा रचनात्मक कार्यक्रम। नकारात्मक कार्यक्रमों में उपाधियों एवं राजकीय सम्मानों का त्याग, सरकार से संबद्ध विद्यालयों एवं महाविद्यालयों का बहिष्कार, न्यायालयों का बहिष्कार, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार आदि की गणना की जा सकती है।

- दूसरी तरफ, रचनात्मक कार्यक्रमों में राष्ट्रीय शिक्षण संस्थानों की स्थापना, ग्राम पंचायतों की स्थापना, कताई-बुनाई को प्रोत्साहन, हिन्दू-मुस्लिम एकता पर जोर, छूआ-छूत का अंत तथा अहिंसा के पालन पर बल दिया गया। गाँधी जी ने जनता को आश्वासन दिया कि अगर उपर्युक्त कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संपादित किया गया तो, एक वर्ष में स्वराज की प्राप्ति हो जायेगी।
- इस समय गाँधीजी ने 'कैसर-ए-हिंद' और जमनालाल बजाज ने 'राय बहादुर' की उपाधि सरकार को वापस कर दी। मोतीलाल नेहरू, तेजबहादुर सप्रू और सैफुद्दीन किचलू तथा चित्तरंजनदास जैसे महत्वपूर्ण वकीलों ने अपने पेशे का परित्याग किया। इस कार्यक्रम को सरल बनाने के लिए बड़ी संख्या में राष्ट्रीय स्कूल तथा कॉलेज खोले गए। इनमें जामिया मिलिया इस्लामिया, काशी विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ तथा गुजरात विद्यापीठ प्रमुख हैं। सुभाष चन्द्र बोस को राष्ट्रीय महाविद्यालय का अध्यक्ष बनाया गया।

- चरखे का प्रसार तथा तिलक स्वराज फंड की स्थापना पर विशेष बल दिया गया। कॉन्ग्रेस की सदस्यता में अभूतपूर्व वृद्धि हुई और देखते-देखते तिलक स्वराज फण्ड में 1 करोड़ रुपये जमा हो गये। खादी तो राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रतीक बन गई।
- स्वदेशी आधार को मजबूत करने के लिये विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार के निर्णय को और प्रभावी ढंग से लागू किया गया।
- 5 फरवरी, 1922 को चौरी-चौरा नामक स्थान पर एक बड़ी हिंसक घटना हुई। इस हिंसात्मक घटना के पश्चात् गाँधी ने 12 फरवरी, 1922 को यह आंदोलन वापस ले लिया।

## ❑ असहयोग आंदोलन में सामाजिक भागीदारी :-

- इस आंदोलन में पहली बार किसानों की भागीदारी, छात्रों और बुद्धिजीवियों की भागीदारी, मुस्लिमों की भागीदारी तथा महिलाओं की भागीदारी हुई।

## ❑ असहयोग आन्दोलन का योगदान :-

- असहयोग आंदोलन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अंतर्गत पहला जन आंदोलन था। इसमें विभिन्न वर्गों की भागीदारी हुई। अब कांग्रेस पर कोई आरोप नहीं लगा सकता था कि कांग्रेस महज मुट्ठी भर अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व करती है।
- क्षेत्रीय आधार पर भी, असहयोग आंदोलन का व्यापक विस्तार देखा गया। कांग्रेस के पूर्व आंदोलनों के विपरीत, जो केवल राजनीतिक दृष्टि से सक्रिय क्षेत्रों को अधिक प्रभावित करते थे, असहयोग आंदोलन ने बिहार संयुक्त प्रांत, गुजरात जैसे अपरपंरागत क्षेत्रों पर भी गहरा प्रभाव छोड़ा।

- कांग्रेस की स्वदेशी एवं बहिष्कार की नीति से देशी उद्योगों को लाभ मिला। रचनात्मक कार्यक्रम के तहत देशी शिक्षण संस्थानों की स्थापना भी हुई; यथा- काशी विद्यापीठ, जामिया मिलिया इस्लामिया आदि। गाँवों में चरखे को प्रोत्साहन मिला तथा छुआ-छूत विरोधी आंदोलन को बल मिला।
- कांग्रेस का संगठनात्मक सुधार हुआ, तथा ग्राम, तालुका एवं जिला स्तर पर समितियों का गठन हुआ। असहयोग आंदोलन ने हिंदू-मुस्लिम एकता को प्रोत्साहन दिया।

## ❑ असहयोग आन्दोलन की सीमाएँ :-

- गांधी जी द्वारा आंदोलन को वापस लिये जाने के कारण लोगों में, विशेषकर युवाओं में, निराशा की लहर फैल गई। उदाहरण के लिए, जवाहरलाल नेहरू ने अपनी निराशा जताई और सुभाषचंद्र बोस ने इसे राष्ट्रीय संकट कहा। वहीं दूसरी तरफ असहयोग और खिलाफत के बीच जो सहमति थी, वह टूट गई।
- खिलाफत जैसे धार्मिक मुद्दे पर एक अखिल भारतीय आंदोलन शुरू करने के निर्णय ने भारतीय राजनीति में एक बहुत गलत मिसाल कायम की, इससे देश में सांप्रदायिक राजनीति को प्रोत्साहन मिला।

(9) क्या गांधी जी के द्वारा असहयोग आन्दोलन को वापस लिए जाने की घटना को आप राष्ट्रीय विपत्ति मानते हैं? अपने मत के पक्ष में उत्तर दीजिए।

गांधी जी ने असहयोग आन्दोलन के माध्यम एक वर्ष में स्वराज का नारा देकर युवाओं की आकांक्षा को बढ़ा दिया था। और उनके द्वारा चौरी चौरा की घटना के बाद अचानक आन्दोलन वापस लिए जाने से युवाओं में तीव्र प्रतिक्रिया हुई तथा सुभाषचन्द्र बोस ने इसे 'राष्ट्रीय विपत्ति' का नाम दिया।

परन्तु निम्नलिखित कारणों से इस राष्ट्रीय विपत्ति कहना उचित नहीं लगता—

- संघर्ष - विराम - संघर्ष

**प्रश्नः उन परिस्थितियों की व्याख्या कीजिए जिसके कारण असहयोग आंदोलन और खिलाफत आंदोलन के बीच सह-संबंध स्थापित हुआ?**

**उत्तरः** राष्ट्रवादी प्रभाव में मुस्लिम लीग पहले से ही सरकार से दूर हटने लगी थी। फिर हाल में कुछ ऐसी घटनाएँ हुईं जिस कारण युवा नेताओं के प्रभाव में मुस्लिम लीग ने खिलाफत के प्रस्ताव को अपना लिया।

1. 1912-13 में यूरोप में ऑटोमन साम्राज्य एवं पूर्वी यूरोप के ईसाई राज्यों के बीच जो संघर्ष हुआ, उसमें पश्चिमी देशों ने ईसाई राज्यों के प्रति अपना झुकाव दिखाया था।
2. मुस्लिम लीग के अनुरोध के बावजूद सरकार ने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के प्रबंधक को अपने नियंत्रण में ले लिया था।
3. प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् सेव्रे की गुप्त संधि में तुर्की को कठोरतापूर्वक दंडित किया जा रहा था, जबकि तुर्की का खलीफा मुस्लिम विश्व का प्रधान था।

मुस्लिम लीग ने जून, 1920 के लखनऊ प्रस्ताव में खिलाफत का प्रस्ताव पारित किया। गांधीजी ने खिलाफत का समर्थन किया तथा फिर गांधीजी कांग्रेस पर भी दबाव डालने लगे कि कांग्रेस भी पंजाब ज्यादती, खिलाफत ज्यादती एवं स्वराज्य के मुद्दे पर अखिल भारतीय आंदोलन आरंभ करे।

हालाँकि कांग्रेस के अंदर गाँधी जी के इस प्रस्ताव का विरोध बना रहा, परन्तु फिर भी गांधीजी ने सितम्बर, 1920 में कलकत्ता के विशेष अधिवेशन में असहयोग के प्रस्ताव का अनुमोदन तो ले लिया, किंतु वे अगस्त में ही असहयोग आंदोलन आरंभ कर चुके थे। फिर आगे दिसम्बर, 1920 के नागपुर अधिवेशन में उन्होंने असहयोग के प्रस्ताव का पूरी तरह अनुमोदन ले लिया।

इस प्रकार असहयोग एवं खिलाफत के मुद्दे के बीच सह-संबंध स्थापित हुआ।

**प्रश्नः क्या गांधी के द्वारा खिलाफत के मुद्दे पर असहयोग आंदोलन चलाया जाना उनकी धर्म-निरपेक्ष साख पर बट्टा लगता है? अपने मत के पक्ष में उत्तर दीजिए।**

**उत्तर :** हालांकि यह सही है कि खिलाफत जैसे धार्मिक मुद्दे पर राजनीतिक आन्दोलन चलाया जाना अल्पकालिक लाभ के लिये दीर्घकालिक घाटे का सौदा सिद्ध हुआ। परन्तु हम ऐसा नहीं कह सकते कि यह गाँधी की धर्मनिरपेक्ष छवि को खराब करता है। इसके कारण निम्नवत् हैं-

- गाँधी 'डिवाइड एंड रूल' के जवाब में 'यूनाइट एंड फाइट' की नीति अपना रहे थे।
- प्रो. इरफान हबीव खिलाफत के मुद्दे को व्यापक वैश्विक सन्दर्भ में देखते हैं। उनके विचार में जब प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् पश्चिमी साम्राज्यवादी शक्तियों के समक्ष सभी अपने घुटने टेक चुके थे तो मुस्तफा कमाल पाशा के अधीन तुर्की पश्चिमी साम्राज्यवाद के विरूद्ध अकेला खड़ा था। वैसी स्थिति में गाँधी जी ने तुर्की को समर्थन देकर अपने आप को साम्राज्यवादी विरोध के मोर्चे से जोड़ दिया।

- गाँधी कम्पोजिट राष्ट्रवाद में विश्वास करते थे जिसके तहत विभिन्न धार्मिक एवं जातीय पहचान के होते हुये भी विभिन्न समूह भारतीय राष्ट्रवाद की मुख्य धारा से जुड़े रहे।

उपर्युक्त कथन के प्रकाश में हम ऐसा कह सकते हैं कि गांधीजी के द्वारा खिलाफत का मुद्दा उठाया जाना उनकी धर्मनिरपेक्ष छवि पर प्रश्न नहीं लगाता।

**प्रश्नः भारतीय आंदोलन में असहयोग आंदोलन की भूमिका का समालोचनात्मक परीक्षण कीजिए।**

**उत्तरः** असहयोग आंदोलन ने कांग्रेस के नेतृत्व को राष्ट्रीय आंदोलन में रूपांतरित कर दिया। उसने उसके स्वरूप एवं लक्ष्य दोनों को परिवर्तित किया। इसे निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है-

1. कांग्रेस का आंदोलन प्रायः बंगाल के भद्रलोक, महाराष्ट्र के चितपावन ब्राह्मण तथा मद्रास के ब्राह्मणों तक सीमित रहा था। परन्तु असहयोग आंदोलन, उत्तर प्रदेश, बिहार, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक जैसे अपरम्परागत क्षेत्र तक भी फैल गया।
2. इसमें व्यापक जनभागीदारी रही। छात्र एवं बुद्धिजीवी, किसान, श्रमिक, महिलाएं, मुसलमान सभी इसमें शामिल रहे थे। यह कांग्रेस के नेतृत्व में पहला जन आंदोलन था। एक तरह से देखा जाये तो यह समकालीन विश्व में सबसे बड़ा आंदोलन था और लॉर्ड डफरिन जैसा कोई ब्रिटिश इस प्रकार का विचार नहीं कर सकता था कि कांग्रेस केवल मुट्ठीभर अल्पसंख्यक समूह का प्रतिनिधित्व करती है।

3. असहयोग आंदोलन ने स्वतंत्रता के लक्ष्य का भी विस्तार किया। इसने राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ सामाजिक स्वतंत्रता पर भी बल दिया, इसका एक प्रमुख कार्यक्रम रहा था छुआ-छूत का अंत।

4. असहयोग आंदोलन ने बहिष्कार की नीति पर बल देकर देशी उद्योगों को भी प्रोत्साहन दिया, साथ ही रचनात्मक कार्यक्रम के तहत इसने देशी शिक्षण संस्थानों की स्थापना पर बल दिया। उदाहरण के लिए, काशी विद्यापीठ, जामिया-मिलिया-इस्लामिया विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ आदि।

5. असहयोग आंदोलन के मध्य संगठनात्मक सुधारों पर भी बल दिया गया। उदाहरण के लिए, कांग्रेस संगठन को मजबूत बनाने के लिए ग्राम, ताल्लुक, जिला, प्रांतीय एवं अखिल भारतीय स्तर पर समिति का गठन किया गया।

परन्तु तस्वीर का एक दु:खद पहलू भी है। असहयोग आंदोलन की अपनी निश्चित सीमाएँ रहीं-

1. खिलाफत के मुद्दे पर असहयोग आंदोलन चलाया जाना राजनीति में धर्म का औचित्य सिद्ध करना था।
2. गांधीजी के द्वारा अचानक असहयोग आंदोलन वापस लिए जाने के कारण एक तरफ युवाओं में निराशा हुई, उदाहरण के लिए, जवाहर लाल नेहरू ने अपनी निराशा जताई और सुभाष चंद्र बोस ने राष्ट्रीय संकट कहा; वहीं दूसरी तरफ असहयोग और खिलाफत के बीच की जो सहमति थी, वो सहमति टूट गई।

उपर्युक्त सीमाओं के बावजूद असहयोग आंदोलन ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन को व्यापक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

**प्रश्नः- पिछली शताब्दी के तीसरे दशक से भारतीय स्वतंत्रता की स्वप्न दृष्टि के साथ सम्बद्ध हो गये नये उद्देश्यों को उजागर कीजिए। ( 250 शब्द, UPSC-2017 )**

**उत्तरः-** राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में, 1920 का दशक एक रचनात्मक चरण के रूप में आया, जिसके दौरान नए उद्देश्य और कार्यक्रम पेश किए गए और उन्होंने आंदोलन को एक नया आयाम दिया।

पहले स्वतंत्रता आंदोलन का उद्देश्य केवल राजनीतिक स्वतंत्रता था, लेकिन इस चरण के दौरान इसमें आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता भी जुड़ गया। नए उद्देश्यों ने आंदोलन की संपूर्ण रणनीति को प्रभावित किया।

- **आर्थिक स्वतंत्रता का उद्देश्य-**

1920 के दशक में राष्ट्रीय आंदोलन के राजनीतिक और आर्थिक मोर्चे एक-दूसरे के करीब आ गए। फिर, इस बात पर जोर दिया गया कि भारतीय समाज के आंतरिक अंतर्विरोधों को भी दूर किया जाना चाहिए। यह अंतर्विरोध उद्योगपतियों और श्रमिकों, जमींदारों और किसानों के बीच मौजूद था। इस दौरान वामपंथी दल अर्थात् कम्युनिस्ट और समाजवादी दल काफी सक्रिय हो गए और किसानों और श्रमिकों को लामबंद करना जारी रखा। इसके अलावा, ट्रेड यूनियन आंदोलन को प्रोत्साहन मिला और 1936 में अखिल भारतीय किसान सभा का गठन हुआ। फिर इसी दौरान, सुभाष और जवाहर लाल नेहरू जैसे युवा नेताओं के अंतर्गत कांग्रेस ने आंतरिक परिवर्तन किया और कराची अधिवेशन (1931), लखनऊ अधिवेशन (1936) और फैजपुर अधिवेशन (1937) में इसने कुछ समाजवादी कार्यक्रम को अपनाया।

- **सामाजिक स्वतंत्रता का उद्देश्य-**

जाति आंदोलन के साथ-साथ महिला अधिकारों के आंदोलन ने राष्ट्रीय आंदोलन में सामाजिक आयाम जोड़े। 1920 के दशक के बाद से महाराष्ट्र में भीमराव अंबेडकर और मद्रास में रामास्वामी पेरियार नायकर जैसे नेताओं ने निचली जाति के लोगों के मुद्दे को राष्ट्रीय प्राथमिकता की सूची में लाया और यहाँ तक कि गांधी ने भी इसे स्वीकार किया। इसी तरह, महिला नेताओं जैसे श्रीमती एनी बेसेंट और डॉ. सरोजिनी नायडू ने महिलाओं के मताधिकार के लिए अभियान चलाया।

इस प्रकार, 1920 के दशक के बाद से राष्ट्रीय आंदोलन की प्रकृति और अधिक समावेशी हो गई।

## असहयोग आंदोलन एवं सविनय अवज्ञा आंदोलन के मध्य कांग्रेस के अंतर्गत भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्य धारा में उभरने वाली प्रवृत्तियाँ

- असहयोग आंदोलन एवं सविनय अवज्ञा आंदोलन कांग्रेस के नेतृत्व में व्यापक जनआंदोलन को दर्शाते हैं, परन्तु इसके बीच के काल में भी आंदोलन चलता रहा था तथा विभिन्न प्रकार की राजनीतिक प्रवृत्तियाँ उभरती रही थीं। ये इस प्रकार हैं-

### रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम

- गाँधी कांग्रेस के कार्यकर्त्ताओं के एक समूह के साथ रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम की ओर मुड़ गये और लगभग 1924 से 1929 तक उस कार्यक्रम में संलग्न रहे। रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यों को अपनाया गया था; यथा-चरखे को लोकप्रिय बनाना, प्रभात फेरी, सड़कों की सफाई, ग्राम पंचायत का गठन, अस्पृश्यता का अंत आदि।

- बिपिन चद्र ने इसे संघर्ष-विराम-संघर्ष का नाम दिया अर्थात् गाँधीजी संघर्ष करते थे, फिर बीच में विराम लेकर पिछले संघर्ष के लाभ को संगठित करते और अगले संघर्ष की तैयारी करते। ऊपरी स्तर पर देखने से यह ज्ञात होता है कि गाँधी का रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम केवल प्रतीकात्मक एवं प्रभावहीन था, परन्तु ग्रामीण क्षेत्र में गाँधीवादी राष्ट्रवाद को फैलाने और कांग्रेस के जनाधार को बढ़ाने में इसका अहम योगदान रहा था।

# स्वराज आंदोलन

- असहयोग आन्दोलन की असफलता के पश्चात् कांग्रेस दो खेमों में विभाजित हो गयी। कांग्रेस का एक खेमा चाहता था कि कांग्रेसियों को पूरी तरह से ग्रामीण क्षेत्रों में रचनात्मक कार्यों में जुट जाना चाहिए। इस खेमे से जुड़े प्रमुख नेता थे – चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, राजेन्द्र प्रसाद, वल्लभ भाई पटेल, एम. ए. अंसारी आदि। ये अपरिवर्तवादी थे। इनका मानना था कि गाँधीवादी रचनात्मक कार्यों के माध्यम से ग्रामीण जनता में जागरुकता आयेगी जो किसी भी आन्दोलन को प्रारंभ करने के लिए आवश्यक है।
- दूसरी तरफ, सी.आर. दास, मोतीलाल नेहरू तथा विठ्ठल भाई पटेल जैसे नेता अपरिवर्तनवादी खेमे की विचारधारा से संतुष्ट नहीं थे। इन्होंने औपनिवेशिक सत्ता का विरोध जारी रखने के लिए विधान मंडलों का बहिष्कार करने की बजाय असहयोग आन्दोलन को विधान मंडलों में ले जाने का सुझाव रखा। इनका कहना था कि विधान परिषदों का सदस्य बनकर वे ब्रिटिश सांविधानिक सुधारों के पाखंड का पर्दाफाश करेंगे। 1 जनवरी, 1923 को इन नेताओं ने एक नई पार्टी 'स्वराज पार्टी' के गठन की घोषणा की।

- स्वराज पार्टी ने भी कांग्रेस के ही कार्यक्रम को अपना कार्यक्रम बनाया तथा रचनात्मक कार्यक्रम की आवश्यकता पर बल दिया। अंतर सिर्फ इतना था कि इस नई पार्टी ने साल के अंत में होने वाले चुनावों में भागीदारी का निश्चय किया था।
- 1 नवम्बर, 1923 के चुनावों में स्वराज पार्टी ने भाग लिया। इस चुनाव में स्वराज पार्टी को बड़ी सफलता प्राप्त हुई। सेंट्रल लेजिस्लेटिव एसेंबली की 105 निर्वाचित सीटों में से 42 पर इनकी जीत हुई। मध्य प्रांत में इसे स्पष्ट बहुमत मिला, तो बंगाल में यह सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी। बम्बई एवं संयुक्त प्रांत में इसका प्रदर्शन अच्छा रहा। सिर्फ मद्रास तथा पंजाब में जातिवादी राजनीति और साम्प्रदायिकता के उभार के चलते इसे खास सफलता नहीं मिल पायी।

- स्वराजी कठिन संघर्ष तथा सभी वर्गों के समर्थन के बावजूद भी 'कौंसिल प्रवेश की राजनीति' के दीर्घकालिक प्रभाव उत्पन्न करने में सफल नहीं हुए। अतः यह आंदोलन शीघ्र ही बिखरने लगा तथा 1926 ई. तक स्वराज पार्टी का अवसान हो गया। इसके बावजूद स्वराज पार्टी की सबसे बड़ी सफलता यह रही कि इसने ऐसे समय में राजनीतिक गतिविधियों को जारी रखा, जब राष्ट्रीय आंदोलन सुस्त पड़ गया था।

# साइमन कमीशन ( 1927 ई. )

- 1919 ई. के भारत शासन अधिनियम के अनुसार लागू की गई द्वैध शासन प्रणाली की सफलता या असफलता की जाँच हेतु एक कमीशन का गठन होना था। इसी के परिप्रेक्ष्य में नवम्बर, 1927 ई. में साइमन कमीशन के गठन की उद्घोषणा हुई। इसमें सात सदस्य थे। साइमन कमीशन के मुद्दे पर सभी भारतीय पार्टियों ने आपत्ति जताई। इस आपत्ति के निम्नलिखित कारण थे –

1. कमीशन का गठन समय से दो वर्ष पूर्व किया गया था।
2. इस कमीशन के सभी सातों सदस्य श्वेत थे, जबकि उस समय ब्रिटिश पार्लियामेंट में भारतीय सदस्य के रूप में लॉर्ड सिन्हा ( सत्येन्द्र प्रसन्न सिन्हा ) तथा सकलतवाला कार्यरत थे।
3. भारतीय नेताओं का कहना था कि भारत की कोई संस्था ही भारतीय संविधान की निर्माता हो सकती थी।
4. भारतीय नेताओं का कहना था कि स्वराज संबंधी योग्यता के लिए किसी परीक्षा की जरूरत नहीं होती है। यह हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।

- 3 फरवरी, 1928 को साइमन कमीशन के बंबई के तट पर उतरने के साथ ही देशव्यापी बहिष्कार आंदोलन प्रारंभ हो गया, जिसमें लगभग सभी दलों ने भागीदारी की। इतना तक कि सुरेन्द्र नाथ बनर्जी के द्वारा गठित इंडियन लिबरल फेडरेशन तथा जिन्ना के नेतृत्व में मुस्लिम लीग ने भी इसका विरोध किया। इसके साथ ही हिंदू महासभा भी इसके विरोध में शामिल थी।
- संयुक्त प्रांत में जवाहरलाल नेहरू और गोविन्द वल्लभ पंत ने इसका विरोध किया। लखनऊ में खलिकुज्जमा ने इस विरोध का नेतृत्व संभाला। पंजाब में इसके विरोध प्रदर्शन में लाला लाजपतराय पर पुलिस ने लाठी चलायी तथा घायल होने से उनकी मृत्यु हो गई।

- 1930 ई. में साइमन कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित की गई। इसमें निम्नांकित प्रावधान किये गए थे –
- इस आयोग ने माना कि भारत सरकार अधिनियम, 1919 द्वारा स्थापित द्वैध शासन व्यवस्था सफल नहीं रही है, अतः इसे समाप्त कर प्रांतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना की जाए तथा भारत की विविधता को देखते हुए केंद्र में संघीय व्यवस्था की स्थापना की जाए।
- पृथक् निर्वाचन व्यवस्था को जारी रखा जाए तथा अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिये गवर्नर-जनरल और गवर्नरों को विशेष अधिकार दिया जाए।
- विधानमंडलों का पुनर्गठन कर सदस्य संख्या का विस्तार किया जाए।
- इसके अतिरिक्त मताधिकार का विस्तार करने, सेना का भारतीयकरण करने तथा भारत के संबंध में गृह सरकार की शक्तियों को कम करने की बात कही गई।
- भारतीयों ने इस रिपोर्ट को अस्वीकार कर दिया क्योंकि इसमें उनकी मुख्य माँग 'स्वराज' या 'डोमिनियन स्टेटस' देने का उल्लेख तक नहीं किया गया था।

## ❑ साइमन कमीशन बहिष्कार कार्यक्रम का महत्व :-

- इसने भारतीय दलों को राजनीतिक मोर्चे पर लामबंद कर ब्रिटिश साम्राज्य के विरोध के लिये प्रेरित किया। इससे राष्ट्रीय आंदोलन को नवीन गति प्राप्त हुई।
- इसमें छात्रों की व्यापक भागीदारी रही, जिसके परिणामस्वरूप छात्रों ने पहली बार राजनीतिक अनुभव प्राप्त कर अनेक छात्र संगठनों को जन्म दिया।
- इसने भारतीयों की 'स्वशासन' की माँग को प्राथमिकता क्रम में ऊपर ला दिया तथा भारतीयों द्वारा भारत के संविधान को निर्मित किये जाने की माँग को प्रबलता से उठाया जाने लगा।

## नेहरू रिपोर्ट ( 1928 ई. )

- भारत के प्रथम देशीय संविधान, नेहरू रिपोर्ट का निर्माण साइमन कमीशन के मुद्दे के साथ जुड़ा हुआ है। दरअसल, 1928 ई. में भारत सचिव बर्केनहेड ने भारतीय दलों को चुनौती दी कि अगर आप में योग्यता है तो आप सर्वसम्मति से एक संविधान प्रस्तुत करें। परिणामतः 1928 ई. में कांग्रेस की एक बैठक हुई और मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक समिति का गठन हुआ जिसका कार्य भारतीय संविधान का निर्माण करना था।
- दिसम्बर, 1928 ई. में कलकत्ता में सर्वदलीय सम्मेलन में नेहरू रिपोर्ट रखी गयी। इसमें निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रावधान थे –
- भारत को डोमिनियन स्टेटस का दर्जा प्राप्त हो, जिसकी स्थिति ब्रिटिश शासन के अंतर्गत अन्य डोमिनियन राज्यों की तरह हो। इस व्यवस्था में प्रतिरक्षा एवं विदेश मामले ब्रिटिश शासन के पास तथा आंतरिक मामलों में भारत को स्वायत्तता प्राप्त होनी थी।

- यहाँ डोमिनियन स्टेटस की चर्चा करते हुए कहा गया था कि संविधान में नागरिकता की व्याख्या होनी चाहिए तथा मौलिक अधिकारों की घोषणा की जानी चाहिए।
- केन्द्र की तरह प्रांतों में भी उत्तरदायी सरकार की स्थापना होगी, जो गवर्नर की कार्यकारिणी परिषद् से जुड़ी होगी। राजनीतिक संरचना मोटे तौर पर एकात्मक ही थी और अवशिष्ट शक्तियाँ केंद्र को दिए जाने का प्रावधान था।
- नेहरू रिपोर्ट में सिफारिश की गई कि सांप्रदायिक चुनाव पद्धति को समाप्त कर उसके स्थान पर संयुक्त निर्वाचन पद्धति अपनाई जाए, जिसमें अल्पसंख्यक वर्ग के हितों को भी सुनिश्चित किया जाए। इस रिपोर्ट में वयस्क मताधिकार की बात की गई।
- महिलाओं के लिये समान अधिकार तथा संगठन बनाने की स्वतंत्रता एवं धर्म का हर प्रकार के राज्य से पृथक्करण की भी चर्चा की गई थी।
- नेहरू रिपोर्ट में कहा गया कि अगर एक वर्ष तक डोमिनियन स्टेटस का दर्जा नहीं दिया गया तो इस सीमा के पश्चात् पूर्ण स्वराज की बात करने के लिए कांग्रेस स्वतंत्र होगी।

## ❖ असफलता :-

- संयुक्त निर्वाचक मंडल एवं कुछ अन्य विषयों पर कॉन्ग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच मतभेद था। परन्तु इस समय नेहरू समिति पर हिंदू महासभा तथा सिख लीग का दबाव था, जो मुस्लिम लीग को रियायत देने के लिए तैयार नहीं थीं। इसके कारण जिन्ना की माँगों पर कोई सहमति नहीं बन पाई, परिणामस्वरूप मुस्लिम लीग ने सर्वदलीय सम्मेलन से अपने को बाहर कर लिया।

# 1929 ई. का लाहौर अधिवेशन एवं पूर्ण स्वराज्य

- कॉन्ग्रेस पर युवा वर्ग का प्रभाव बढ़ रहा था। जवाहरलाल नेहरू तथा सुभाष चन्द्र बोस ने पूर्ण स्वाधीनता के लक्ष्यों को स्वीकार करवाने के लिये कांग्रेस के भीतर ही एक दबाव समूह के रूप में 'इंडिपेंडेंस फॉर इंडिया लीग' की स्थापना की। वे डोमिनियन स्टेटस की जगह पूर्ण स्वराज की माँग के पक्षधर थे। दूसरी तरफ, गाँधी भी 6 वर्ष के लंबे अंतराल के बाद सक्रिय राजनीति में लौट आए।
- 1929 ई. में गाँधीजी की मध्यस्थता से जवाहरलाल को लाहौर अधिवेशन का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। लाहौर अधिवेशन में निम्नलिखित महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए–

  1. इसमें पूर्ण स्वराज के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया।
  2. सविनय अवज्ञा आन्दोलन के प्रस्ताव को भी स्वीकार कर लिया गया।

3. 31 दिसंबर, 1929 को मध्य रात्रि में रावी नदी के तट पर तिरंगा झंडा फहराया गया तथा 26 जनवरी, 1930 ई. को संपूर्ण देश में 'स्वतंत्रता दिवस' मनाने का निर्णय लिया गया।

- एक तरह से अगर देखा जाये तो लाहौर प्रस्ताव एवं पूर्ण स्वराज्य की घोषणा एक आंदोलन से कम नहीं थी क्योंकि भारत एक नये लक्ष्य की ओर बढ़ गया था।

# 1920 के दशक में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में विभिन्न वर्गों की भागीदारी

## ❑ क्रांतिकारी राष्ट्रवाद की प्रगति

- असहयोग आंदोलन की असफलता ने आंदोलन के युवा कार्यकर्त्ताओं के मध्य निराशा तथा असंतोष के बीज बो दिए। युवाओं का एक वर्ग जो गाँधीवादी समाधान से संतुष्ट नहीं था, उसने अपने को क्रांतिकारी राजनीति से जोड़ लिया।संयुक्त प्रांत में दो पुराने क्रांतिकारी सचिन सान्याल एवं योगेन्द्र चन्द्र चटर्जी की पहल पर कानपुर में 1924 में 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन आर्मी' का गठन किया गया। इस संस्था की स्थापना का उद्देश्य था सशस्त्र क्रांति के माध्यम से औपनिवेशिक सत्ता को उखाड़ फेंकना तथा एक संघीय गणतंत्र संयुक्त राज्य भारत की स्थापना करना।
- हिंदुस्तान रिपब्लिकन आर्मी ने धन जमा करने के उद्देश्य से पहली बड़ी कार्यवाही काकोरी में रेल का खजाना लूट कर की, परंतु इसके पश्चात् बहुत से क्रांतिकारी नेता गिरफ्तार हो गए। इसमें राम प्रसाद बिस्मिल, रोशन सिंह, अशफाक उल्ला खाँ तथा राजेंद्र लाहिड़ी को फाँसी दे दी गई।

भगत सिंह - राष्ट्र-निर्माण के वैकल्पिक मार्ग —

(i) समाजवाद

(ii) धर्मनिरपेक्षता।

- काकोरी ट्रेन डकैती के पश्चात् पार्टी को पुनर्संगठित करने का काम चन्द्रशेखर आजाद ने किया। 1928 ई. में दिल्ली के फिरोजशाह कोटला की बैठक में भगतसिंह की पहल पर पार्टी का नाम बदलकर 'हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' रखा गया। इस पर समाजवादी विचारधारा का गहरा प्रभाव देखा गया।
- जब पूरे देश में सविनय अवज्ञा आंदोलन का जोर था तो उसी समय चटगाँव के एक राष्ट्रीय स्कूल के शिक्षक सूर्यसेन ने इंडियन रिपब्लिकन आर्मी के नाम से 18 अप्रैल को चटगाँव शस्त्रागार पर कब्जा कर लिया। इसके तत्काल बाद ही भारत की एक अस्थाई स्वतंत्र सरकार का गठन किया गया जिसके राष्ट्रपति स्वयं सूर्यसेन थे। इस क्रांतिकारी संगठन में व्यापक रूप से महिलाओं की भी भागीदारी दिखती है।
- कुल मिलाकर क्रांतिकारी, बलपूर्वक ब्रिटिश सरकार का तख्ता पलटने में कामयाब नहीं हो पाए। फिर भी क्रांतिकारियों का योगदान इस बात में महत्वपूर्ण है कि जब भी कांग्रेस के अंतर्गत आंदोलन की मुख्य धारा शिथिल पड़ जाती, तो क्रांतिकारी राष्ट्रवादी इस शून्य को भरने का प्रयास करते तथा अभूतपूर्व आत्मत्याग तथा बलिदान का उदाहरण देकर लोगों में राष्ट्रीयता को जगाने का प्रयास करते।

# 1920-29

## राष्ट्रवाद की प्रगति

- 1920 के दशक में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के स्वरूप एवं सामाजिक आधार दोनों में परिवर्तन
  - किसानों में जागृति
  - श्रमिक वर्ग
  - महिलाओं में जागृति
  - दलित वर्ग

## ❑ किसानों में जागृति

- 1920 के दशक में किसानों में भी जागृति आ रही थी तथा किसानों की प्रांतीय सभा का गठन हो रहा था। अवध में किसान सभा की स्थापना हुई, जिसने बेदखली रोको आन्दोलन (1920-21) प्रारम्भ किया। आगे मदारी पासी के नेतृत्व में उत्तरी-पश्चिमी संयुक्त प्रांत में एका आंदोलन (1921-22) ने जोर पकड़ लिया। केरल के मालाबार तट पर मोपला कृषकों ने हिन्दू भू-स्वामियों के खिलाफ विद्रोह कर दिया, जिसने कहीं-कहीं भयंकर साम्प्रदायिक रुख अख्तियार कर लिया। 1928 में, बारदोली के किसानों ने वल्लभाई पटेल को सत्याग्रह शुरू करने के लिए आमंत्रित किया जिसमें उन सभी किसनों ने कर का भुगतान न करने का संकल्प लिया। 1929 ई. में सहजानंद सरस्वती ने बिहार किसान संघ की स्थापना की।

1. बेदखली रोको आन्दोलन (1920-21) (3) बारदोली सत्याग्रह
2. एका आंदोलन

## ❑ श्रमिक आंदोलन

- अब श्रमिकों में भी विरोध की चेतना जाग रही थी। 1920 के असहयोग आंदोलन में भी श्रमिकों की बड़ी सक्रियता रही थी और फिर 1920 में ऑल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC) की स्थापना हुई जिसकी अध्यक्षता लाला लाजपत राय ने की।
- 1920 के दशक में श्रमिकों को संगठित करने में साम्यवादी नेताओं की भी अहम भूमिका रही। इसी काल में साम्यवादियों के द्वारा श्रमिक एवं किसान पार्टी तथा "गिरनी कामगार यूनियन" का गठन किया गया।

## ❑ महिलाओं में जागृति

- 1920 के दशक में महिलाओं में भी जागृति आ रही थी। आयरिश महिला श्रीमती एनी बेसेंट तथा मार्ग्रेट कजिंस के द्वारा कई महिला संगठनों की स्थापना की गई। इंटरनेशनल वुमेन्स एसोसिएशन के भाग के रूप में उन्होंने वूमेन्स इंडियन एसोसिएशन का भी गठन किया।
- श्रीमती एनी बेसेंट तथा सरोजिनी नायडू जैसी महिला नेताओं ने महिला मताधिकार के मुद्दों को गंभीरता से उठाया। इनके प्रयास से 1921 और 1930 के बीच प्रांतीय बिहार मंडलों में महिलाओं को मताधिकार मिला।
- 1927 में अखिल भारतीय महिला कॉन्फ्रेंस का गठन हुआ तथा इसने महिला शिक्षा से लेकर महिला मताधिकार तक कई मुद्दों को उठाया।
- फिर स्वयं गांधीवादी आंदोलन ने भी महिला जागृति में बढ़-चढ़कर भूमिका निभाई। कहा जाता है कि विश्व के कुछ अन्य लोकप्रिय नेताओं; यथा- सोवियत रूस के लेनिन, चीन के माउत्से तुंग तथा वियतनाम के हो-ची-मिन्ह की तुलना में गांधीवादी आंदोलन में महिलाओं की कहीं अधिक भागीदारी रही थी।

## ❑ निम्न जातीय आंदोलन

- 1920 के दशक में स्वतंत्रता के अर्थ का विस्तार सामाजिक स्वतंत्रता के क्षेत्र में भी हुआ। महिला एवं निम्न जातीय आंदोलन को इस संदर्भ में देखने की जरूरत है।
- निम्न जाति में जागृति फैलाने में ई.वी. रामास्वामी नायकर 'पेरियार' तथा डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। इन दोनों ने मनु समृति को जलाकर जाति व्यवस्था की आलोचना की। पेरियार नायकर ने मद्रास में निम्न जाति के उत्थान के लिए 'आत्मसम्मान आंदोलन' आरंभ किया तथा 'कुडि अरसु' नामक पत्र के माध्यम से अपने विचारों को फैलाते रहे। आगे ये द्रविड़ आंदोलन के जनक बने।
- डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने न केवल महाराष्ट्र की अछूत जाति महारों को संगठित किया, बल्कि सम्पूर्ण जीवन निम्न जाति एवं महिलाओं के अधिकारों के लिए लड़ते रहे और सामाजिक न्याय के विचारों को फैलाते रहे।

❖ **डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने दलितों की सुरक्षा के क्रम में निम्नलिखित कदम उठाये-**

1. उनहोंने महारों को यह सुझाव दिया कि वे गंदगी की सफाई और मरे हुए पशुओं को ढोना बंद करें।
2. उन्होंने ब्रिटिश के समक्ष दलित वर्ग के उत्थान की बात उठाई।
3. साइमन कमीशन एवं गोलमेज सम्मेलन में उन्होंने दलितों के मौलिक अधिकार और पृथक निर्वाचन की माँग रखी।
4. वे विधानमंडल में दलितों के शोषण की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करते रहे। आगे संविधान सभा में उन्होंने दलित वर्ग के हितों को संरक्षित कर दिया।

**अभ्यास प्रश्न:**

1. *1920 के दशक से राष्ट्रीय आंदोलन ने कई वैचारिक धाराओं को ग्रहण किया और अपना सामाजिक आधार बढ़ाया। विवेचना कीजिए। (250 शब्द, UPSC-2020 )*
2. *गांधीवादी प्रावस्था के दौरान विभिन्न स्वरों ने राष्ट्रवादी आंदोलन को सुदृढ़ एवं समृद्ध बनाया था। विस्तारपूर्वक स्पष्ट कीजिए। ( 250 शब्द, UPSC-.2019 )*

(9) गांधी जी ने ब्रिटिश साम्राज्य को ही नहीं बल्कि पश्चिमी संस्कृति को भी चुनौती दी। टिप्पणी कीजिए।

# सम्प्रदायवाद की प्रगति

## ❖ 1920 के दशक में कांग्रेस से जिन्ना का अलगाव :-

- 1920 के दशक में गाँधी के नेतृत्व में जनआंदोलन का युग आरंभ हुआ तो जिन्ना को अपना राजनीतिक कद छोटा होने का भय सताने लगा। अतः जिन्ना कांग्रेस से दूर होते चले गये तथा मुस्लिम लीग के नेता के रूप में उभरे। उन्होंने अपनी सांप्रदायिक पहचान बनाए रखने पर बल दिया।
- फिर भी, वे अभी भी उदार सम्प्रदायवादी बने रहे। यही वजह है कि साइमन कमीशन बहिष्कार आंदोलन में भी जिन्ना के अधीन मुस्लिम लीग का एक गुट शामिल हुआ। फिर 1928 में नेहरू रिपोर्ट ने संयुक्त निर्वाचन का प्रस्ताव रखा, तो इस पर मुस्लिम लीग के शफी खान का गुट वार्ता करने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं था, वहीं जिन्ना वार्ता करने के लिए तैयार थे।

- वस्तुतः 22 दिसंबर, 1928 ई. को कलकत्ता सर्वदलीय सम्मेलन, जिसकी अध्यक्षता डॉ. अंसारी कर रहे थे, में नेहरू रिपोर्ट को पुनः विचारार्थ रखा गया। इसमें मुस्लिम लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना ने पृथक् निर्वाचन पद्धति को छोड़ने एवं मुस्लिमों के हितों को संरक्षित करने की दृष्टि से नेहरू रिपोर्ट में तीन संशोधनात्मक सुझाव दिये जो कि निम्नलिखित हैं-

1. केन्द्रीय विधानमंडल में एक-तिहाई सीटें मुसलमानों के लिए आरक्षित की जाएं।
2. पाँच मुस्लिम बहुल प्रांतों में मुसलमानों को जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व दिया जाए।
3. अवशिष्ट शक्तियाँ प्रांतों में निहित कर दी जाएं।

- परन्तु कलकत्ता सर्वदलीय सम्मेलन में भी इन माँगों पर सहमति नहीं बन सकी। इसके परिणामस्वरूप मुस्लिम लीग ने सर्वदलीय सम्मेलन से अपने को बाहर कर लिया।

## ❖ जिन्ना का दिल्ली घोषणापत्र ( मार्च, 1929 ) :-

- कलकत्ता सर्वदलीय वार्ता टूटने के बाद जिन्ना ने दिल्ली घोषणा-पत्र लाया तथा इसमें 14 सूत्रीय साम्प्रदायिक माँगें रखी गयीं और ये माँगें आगे मुस्लिम लीग की साम्प्रदायिक राजनीति का आधार बन गईं। जिन्ना की 14 माँगों में प्रमुख माँगें निम्नलिखित थीं-

1. भारत का संविधान परिसंघात्मक हो, जिसमें अवशिष्ट शक्तियाँ प्रांतों को प्राप्त हों।
2. केंद्रीय विधानमंडल में मुसलमानों के लिये कम-से-कम एक तिहाई प्रतिनिधित्व प्राप्त हो।
3. सभी प्रांतों को एक समान स्वायत्तता प्रदान करने के साथ-साथ प्रांतीय विधानमंडलों तथा अन्य निर्वाचित निकायों में अल्पसंख्यकों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया जाए।
4. विभिन्न सांप्रदायिक समूहों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए पृथक् निर्वाचन मंडल की व्यवस्था लागू रहे।

5. विधानमंडलों एवं अन्य निर्वाचित संस्थाओं में ऐसा कोई प्रस्ताव पारित नहीं किया जाए, जिसका किसी संप्रदाय के तीन-चौथाई सदस्यों ने विरोध किया हो।

- इसके अतिरिक्त, सभी संप्रदायों के लिये धार्मिक स्वतंत्रता, सिंध को बंबई से अलग करने तथा राज्य एवं स्थानीय संस्थाओं की सेवाओं में मुस्लिमों के लिये पर्याप्त आरक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित करने की माँग की गई।

*****

समाप्त

# आधुनिक भारत

## ( खंड-3 )

# भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन ( 1929-39 )

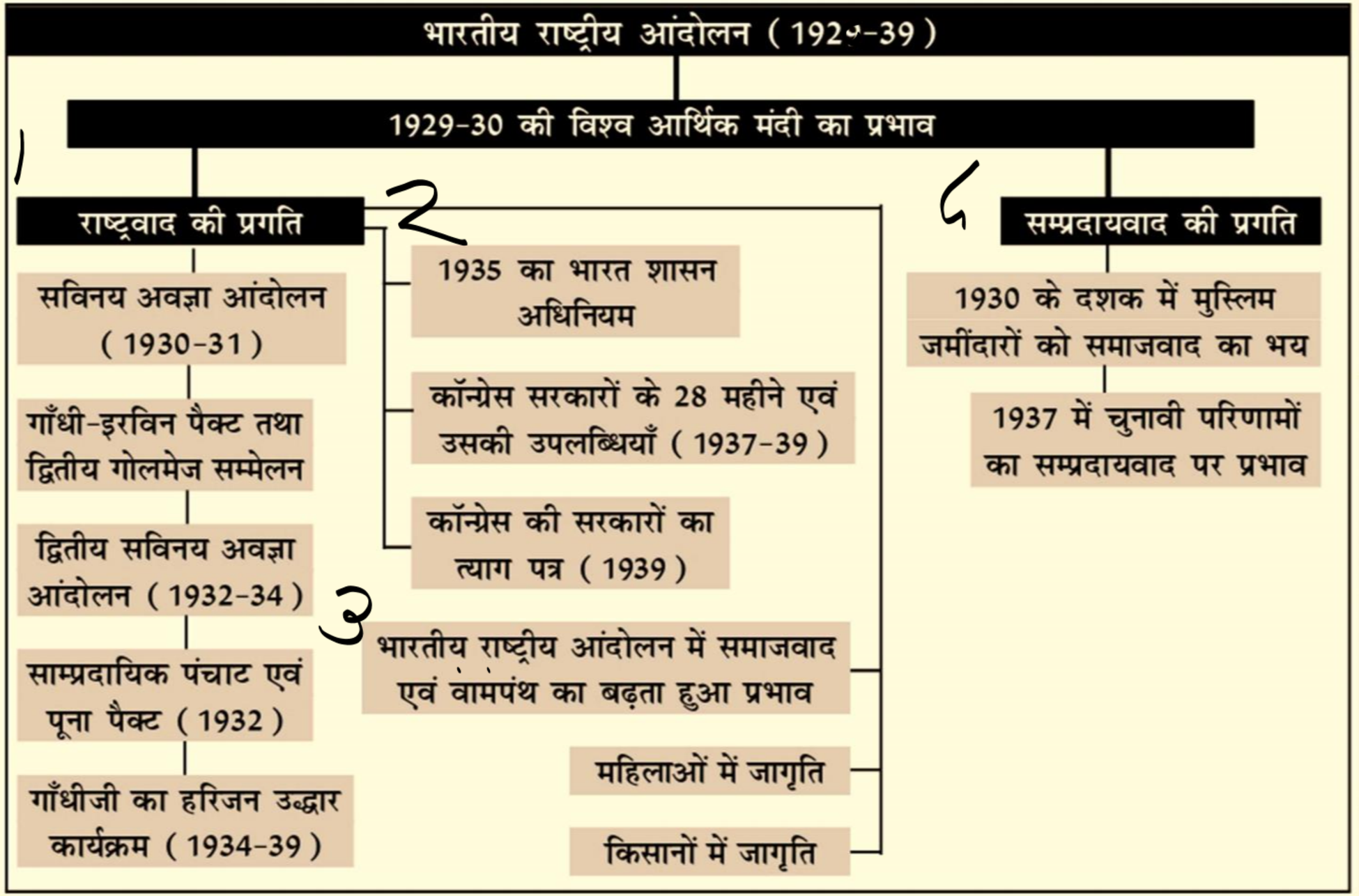
भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन (1929-39)
1929-30 की विश्व आर्थिक मंदी का प्रभाव
1
राष्ट्रवाद की प्रगति
सविनय अवज्ञा आंदोलन (1930-31)
गाँधी-इरविन पैक्ट तथा द्वितीय गोलमेज सम्मेलन
द्वितीय सविनय अवज्ञा आंदोलन (1932-34)
साम्प्रदायिक पंचाट एवं पूना पैक्ट (1932)
गाँधीजी का हरिजन उद्धार कार्यक्रम (1934-39)
2
1935 का भारत शासन अधिनियम
कॉन्ग्रेस सरकारों के 28 महीने एवं उसकी उपलब्धियाँ (1937-39)
कॉन्ग्रेस की सरकारों का त्याग पत्र (1939)
3
भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में समाजवाद एवं वामपंथ का बढ़ता हुआ प्रभाव
महिलाओं में जागृति
किसानों में जागृति
4
सम्प्रदायवाद की प्रगति
1930 के दशक में मुस्लिम जमींदारों को समाजवाद का भय
1937 में चुनावी परिणामों का सम्प्रदायवाद पर प्रभाव

# सविनय अवज्ञा आंदोलन

- 1930 तक भारत में आंदोलन की पृष्ठभूमि बनने लगी थी। इसमें निम्नलिखित कारकों का योगदान रहा था–

1. 1929–30 की विश्व आर्थिक मंदी ने भारत के विभिन्न सामाजिक वर्गों को प्रभावित किया। इसने धनी एवं निर्धन किसान, पूँजीपति एवं श्रमिक, सभी पर पृथक्–पृथक् प्रभाव छोड़ा तथा विभिन्न आंदोलनों में उनकी भागीदारी को सुनिश्चित किया।

- धनी किसान इस मंदी से इसलिए प्रभावित हुए क्योंकि वे बाजार के लिए उत्पादन करते थे, वहीं निर्धन किसानों के लिए महाजनी ऋण की कमी पड़ गई। उसी प्रकार, पूँजीपति साम्राज्यवादी वरीयता के प्रावधान तथा रूपये को मजबूत किये जाने से क्षुब्ध थे। दूसरी तरफ, मजदूरों को छँटनी का भय सता रहा था। अतः इस दौरान मजदूरों की भागीदारी विभिन्न आंदोलनों में अपेक्षाकृत कम हुई थी। इसलिए 1930 के दशक में वर्गीय आंदोलन ने राजनीतिक दिशा को प्रभावित किया तथा इस काल में आंदोलनों में तेजी आयी।

2. भारतीय युवा वर्ग में असंतोष बढ़ रहा था। उनमें से अनेक युवा क्रांतिकारी राष्ट्रवाद की ओर बढ़ रहे थे। गाँधीजी एक बार फिर उन्हें राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्य धारा में लाना चाहते थे।

3. गाँधीजी रचनात्मक ग्रामीण कार्यकम के माध्यम से कॉन्ग्रेस का जनाधार काफी विकसित कर चुके थे और अब वे नये आंदोलन के लिए तैयार थे।

4. 1929 के लाहौर अधिवेशन में कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव पारित किया तथा अखिल भारतीय कांग्रेस समिति को एक आंदोलन छेड़ने के लिए भी अधिकृत किया। फिर जनवरी, 1930 में गाँधी ने इर्विन के समक्ष ग्यारह सूत्री मांगें रखीं, जिनका इर्विन द्वारा कोई जवाब नहीं देने पर गाँधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ने का निर्णय लिया।

- गाँधीजी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन की शुरूआत 'नमक कर कानून' के उल्लंघन के साथ करने का निर्णय लिया। फिर 12 मार्च, 1930 को गाँधीजी ने साबरमती आश्रम से 78 अनुयायियों के साथ यात्रा शुरू की जिसे 'दाण्डी मार्च' कहा जाता है। उन्होंने 6 अप्रैल, 1930 ई. को दांडी में नमक कानून का उल्लघंन किया।

- सविनय अवज्ञा आंदोलन में एक व्यापक कार्यक्रम अपनाया गया। उदाहरण के लिए, तटीय क्षेत्र में नमक कानून का उल्लंघन, रैयतवाड़ी क्षेत्र में कर रोको आंदोलन, जमींदारी क्षेत्र में चौकीदारी कर रोको आंदोलन, नशीले पदार्थों की बिक्री करने वाले दुकानों के समक्ष धरना आदि।
- गाँधी की गिरफ्तारी के शीघ्र बाद यह आंदोलन भारत के विभिन्न क्षेत्रों में फैल गया। दक्षिण भारत में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने नमक कानून का उल्लंघन किया। उत्तर-पश्चिमी भारत में खान अब्दुल गफ्फार खाँ के नेतृत्व में पठानों ने 'खुदाई खिदमतगार' नामक संगठन बनाकर आंदोलन में भाग लिया। इसी तरह, आंदोलन का प्रसार पूर्वी एवं उत्तर-पूर्वी भागों में भी हुआ। फिर जनजातीय क्षेत्रों में आदिवासियों ने बड़े पैमाने पर वन कानूनों का उल्लंघन किया।
- **नमक को एक महत्त्वपूर्ण मुद्दे के रूप में क्यों चुना गया? :-** गाँधी ने सोच-समझकर नमक के मुद्दे को उठाया। नमक के माध्यम से उन्होंने भारत के करोड़ों चूल्हों को राष्ट्रीय आंदोलन से जोड़ दिया। सामान्य लोगों के लिए नमक का मसला एक आर्थिक मसला था, जबकि भारतीय बुद्धिजीवियों के लिए यह राष्ट्रीय स्वाभिमान का प्रश्न था। इस तरह नमक के मुद्दे को उठाकर गाँधी ने भारतीय बुद्धिजीवी एवं जनसामान्य के बीच की खाई पाट दी।

- **सामाजिक भागीदारी :-** सविनय अवज्ञा आंदोलन में व्यापक जनभागीदारी हुई थी। इसमें असहयोग आंदोलन की तुलना में किसानों की भागीदारी अधिक रही। उसी प्रकार, इसमें महिलाओं की भी भागीदारी रही। सबसे बढ़कर, असहयोग आंदोलन के विपरीत इसमें पूँजीपति वर्ग की भागीदारी रही। किन्तु इसमें छात्रों और बुद्धिजीवियों की भागीदारी आंशिक दिखती है। दूसरी तरफ, असहयोग आंदोलन के विपरीत इसमें मजदूरों की भी सीमित भागीदारी रही। इसके अलावा, इस आंदोलन में हिंदुओं और मुस्लिमों में वैसी एकता देखने को नहीं मिली जैसी असहयोग आंदोलन के समय दिखाई दी थी।
- असहयोग आंदोलन एवं सविनय अवज्ञा आंदोलन के मध्य एक मूलभूत अंतर यह था कि असहयोग आंदोलन ने **'स्वराज'** को अपना लक्ष्य बनाया था, जबकि सविनय अवज्ञा आंदोलन ने **'पूर्ण स्वराज'** को अपना लक्ष्य घोषित किया था।

- भारतीय पूंजीपति वर्ग द्वारा कॉन्ग्रेस पर आंदोलन समाप्त करने के लिए दबाव बनाया जा रहा था क्योंकि निरंतर श्रमिक हड़ताल, आंदोलन एवं राजनीतिक उथल-पुथल से इस वर्ग को घाटा उठाना पड़ रहा था। दूसरी तरफ, मध्य प्रांत, महाराष्ट्र और कर्नाटक क्षेत्र में आदिवासी विद्रोह अनियंत्रित और खतरनाक रूप धारण कर रहे थे।
- 5 मार्च, 1931 को गाँधी एवं वायसराय इर्विन के मध्य एक समझौता हुआ जो 'गाँधी-इर्विन समझौता' के नाम से जाना जाता है। इस समझौते के निम्नलिखित पहलू थे-
  - गाँधी जी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन को वापस ले लिया।
  - उन लोगों की रिहाई की जाए, जिन्होंने हिंसक घटनाओं में भाग नहीं लिया था।
  - उन लोगों को संपत्ति वापस दे दी जाए, जिनकी संपत्ति अधिग्रहण के पश्चात् किसी तीसरी पार्टी को नहीं बेची गयी हो।
  - तटीय क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों को अपनी जरूरत को पूरा करने के लिए नमक बनाने की भी अनुमति दी गई।
  - लोगों को शांतिपूर्ण ढंग से नशीले पदार्थों की दुकानों पर धरना देने का भी अधिकार दिया गया।

## ❑ द्वितीय गोलमेज सम्मेलन ( 1931 ) :-

- 1930 में होने वाले प्रथम गोलमेज सम्मेलन में कांग्रेस ने हिस्सा नहीं लिया था, किंतु 1931 में गाँधी-इर्विन पैक्ट के पश्चात् कांग्रेस के एक मात्र प्रतिनिधि के रूप में द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में हिस्सा लेने गाँधी जी लंदन गये। इस सम्मेलन में विभिन्न भारतीय राजनीतिक दलों और गुटों को प्रतिनिधित्व मिला हुआ था। गाँधीजी ने उन सबके साथ मिलकर भारत के संवैधानिक मुद्दे को आगे बढ़ाना चाहा, किंतु उन्हें निराशा तब हुई जब उन्होंने यह देखा कि मुस्लिम वर्ग के मॉडल पर दलित वर्ग, एंग्लो इंडियन, भारतीय ईसाई, यूरोपीय समूह सभी पृथक निर्वाचन की माँग करने लगे थे। गाँधी ने उन माँगों को ठुकरा दिया।
- फिर गाँधी को गहन निराशा तब हुई जब उन्होंने यह पाया कि रैम्जे मैकडोनाल्ड की सरकार कांग्रेस के साथ इस प्रकार का व्यवहार कर रही थी, मानो कांग्रेस भी अन्य भारतीय हित समूहों की तरह केवल एक हित समूह है। अतः गाँधी निराश होकर लंदन से वापस आ

## ❑ द्वितीय सविनय अवज्ञा आंदोलन :-

- इधर इर्विन की जगह एक अनुदारवादी वायसराय लॉर्ड विलिंग्डन का आगमन हो चुका था, जिसने कॉन्ग्रेस के प्रति दमनात्मक रुख अपनाया। उसने जवाहर लाल नेहरू तथा खान अब्दुल गफ्फार खान को गिरफ्तार कर लिया था। गाँधी ने आने के बाद वायसराय से साक्षात्कार के लिए समय की माँग की, किंतु वायसराय ने उन्हें साक्षात्कार देने से इंकार कर दिया।
- अब गाँधी के पास दूसरा कोई विकल्प नहीं था, अतः उन्होंने एक बार फिर 4 जनवरी, 1932 को सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ दिया। किंतु सरकार पहले से ही तैयार थी, कई प्रकार के दमनात्मक कानून बनाये जा चुके थे, कांग्रेस एक गैर कानूनी संस्था घोषित कर दी गई तथा सरकार का उग्र दमन चक्र आरंभ हुआ, इस प्रकार आंदोलन की कमर टूटने लगी।

## ❑ सांप्रदायिक पंचाट तथा पूना पैक्ट :-

- वस्तुतः द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में विभिन्न संप्रदायों एवं दलित वर्गों के लिये पृथक निर्वाचन मंडल के विषय पर कोई सहमति नहीं बन पायी थी। अतः इस समस्या के समाधान के लिये ब्रिटिश प्रधानमंत्री रैम्जे मैकडोनाल्ड ने 16 अगस्त, 1932 ई. को एक घोषणा की, जिसे 'सांप्रदायिक पंचाट' कहा जाता है।
- मुसलमान, सिख तथा यूरोपियनों को पहले से ही पृथक् निर्वाचन का अधिकार था, अब इस साप्रदायिक पंचाट के तहत दलितों को भी हिंदुओं से अलग एक अल्पसंख्यक वर्ग मानकर पृथक् निर्वाचन का अधिकार दे दिया गया। ब्रिटिश सरकार के इस निर्णय को गांधीजी ने एक राष्ट्र के रूप में भारत को तोड़ने के लिये ब्रिटिशों का एक षड्यंत्र माना। अतः गाँधीजी ने सांप्रदायिक पंचाट का विरोध करने के लिये यरवदा जेल में 20 सितंबर, 1932 ई. से आमरण अनशन प्रारंभ कर दिया।

- मदन मोहन मालवीय की मध्यस्थता में गाँधी एवं डॉ. अंबेडकर के बीच एक समझौता हुआ, जो 'पूना समझौता' के नाम से जाना जाता है। पूना समझौता के अनुसार, अंबेडकर ने पृथक् निर्वाचन पद्धति के स्थान पर संयुक्त निर्वाचन पद्धति को स्वीकार कर लिया। इसके बदले केंद्रीय विधान परिषद् में दलित वर्ग के लिये सीटों की संख्या में लगभग 18% की वृद्धि की गई तथा प्रांतीय विधान मंडलों में सीटों की संख्या को 71 से बढ़ाकर 148 कर दिया गया।

## ❑ गाँधीजी का हरिजन उद्धार कार्यक्रम :-

- पूना समझौते के बाद गाँधी को एक नया मुद्दा मिल गया, वह था हरिजन उद्धार कार्यक्रम। फिर गाँधी ने हरिजन यात्रा शुरू की तथा रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम में लग गए। हरिजन यात्रा के दौरान उन्होंने छुआ-छूत उन्मूलन का व्यापक प्रचार-प्रसार किया। इस समय गांधीजी ने स्वराज से अधिक अस्पृश्यता को महत्त्व दिया। उन्होंने 'अछूतों' को 'हरिजन' (ईश्वर की संतान) की संज्ञा देकर उन्हें मंदिरों, सार्वजनिक तालाबों, सड़कों एवं कुँओं पर समान अधिकार दिलाने के लिये सत्याग्रह प्रारंभ कर दिया। उन्होंने 'हरिजन' नामक पत्र का संपादन आरंभ किया तथा 'हरिजन सेवक संघ' की स्थापना की। अब उनका ध्यान सविनय अवज्ञा आंदोलन से हट गया। अतः मई, 1933 ई. में उन्होंने सविनय अवज्ञा आंदोलन को अस्थायी रूप से और अप्रैल, 1934 में स्थायी रूप से वापस ले लिया।

**प्रश्न :- अपसारी उपागमों एवं रणनीतियों के होने के बावजूद महात्मा गांधी और डॉ. भीमराव अंबेडकर का दलितों की बेहतरी का एक समान लक्ष्य था। स्पष्ट कीजिये। ( UPSC-2015 )**

- (प्रश्न विश्लेषण: यह प्रश्न अपने स्वरूप में **Hypothetical** है। **Key Words** हैं- 'अपसारी', 'उपागम', 'रणनीतियों', 'महात्मा गांधी', 'भीमराव अंबेडकर', 'दलितों की बेहतरी', 'लक्ष्य', 'स्पष्ट'।)

**उत्तर:** जब हमारे समक्ष दलित वर्ग के उत्थान का मुद्दा आता है तो हमारे मस्तिष्क में गांधी एवं अंबेडकर, दोनों की छवि उभरती है। दोनों आज़ादी को दलित वर्ग की दहलीज तक पहुँचाना चाहते थे। यद्यपि उनके सोचने के अंदाज तथा काम करने की पद्धति में अंतर था। इसे निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है-

- अंबेडकर दलित वर्ग के उत्थान के लिये आर्थिक पुनर्वितरण को आवश्यक मानते थे। उनका विचार था कि जब तक दलित लोग आर्थिक रूप से स्वावलंबी नहीं होंगे, तब तक वे सामाजिक शोषण से मुक्त नहीं हो सकेंगे। वहीं गांधी जी का मानना था कि अस्पृश्यता की समस्या सामाजिक मुद्दा है, इसलिये सामाजिक मोर्चे पर ही उसका हल ढूंढ़ा जाना चाहिये।

- उसी तरह अंबेडकर का मानना था कि दलित वर्ग का उत्थान तभी होगा, जब दलित वर्ग में अपने अधिकारों के प्रति सजगता होगी, परंतु गांधीजी, सवर्णों में करुणा का भाव जगाकर दलितों की दशा सुधारना चाहते थे। इसलिये दोनों अपनी सोच तथा अनुभव के आधार पर काम करते रहे।
- एक तरफ अंबेडकर ने जबरन मंदिर प्रवेश कार्यक्रम में दलित वर्ग का नेतृत्व किया, वहीं गांधीजी ने अछूतोद्धार कार्यक्रम पर बल दिया तथा सवर्णों को अपनी मानसिकता बदलने के लिये प्रोत्साहित किया।
- आरक्षण के मुद्दे पर भी गांधीजी तथा अंबेडकर के दृष्टिकोण में मतभेद था। गांधीजी आरक्षण को स्थायी विषमता उत्पन्न करने वाला कारक मानते थे, वहीं अंबेडकर दलित वर्ग के उत्थान के लिये आरक्षण को आवश्यक मानते थे। अंबेडकर के इस दृष्टिकोण को अंततः संविधान में जगह मिली।

- अंत में, अंबेडकर एक बुद्धिजीवी थे तथा उन्होंने दलित उत्थान के मुद्दे पर संसद, संविधान सभा एवं अन्य प्रकार के राजनीतिक मंचों पर अकादमिक बहस छेड़ी, वहीं गांधीजी एक सामाजिक कार्यकर्त्ता थे, अतः वे गाँव-गाँव में घूमकर तथा दलितों के बीच जाकर उनके उत्थान के लिये कार्य करते रहे।

उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में हम ऐसा कह सकते हैं कि भारत में जो दलित उत्थान कार्यक्रम है, वह गांधीजी तथा अंबेडकर, दोनों की विरासत से संबद्ध है।

**प्रश्न :- "ब्रिटिश के विरुद्ध गांधीवाद सबसे खतरनाक हथियार सिद्ध हुआ।" टिप्पणी कीजिये।**

- (प्रश्न विश्लेषण: यह प्रश्न अपने स्वरूप में **Hypothetical** है। इसमें निम्नलिखित **Key Words** हैं- 'विरुद्ध', 'गांधीवाद', 'खतरनाक हथियार', 'टिप्पणी'।)

**उत्तर:** पश्चिमी साम्राज्यवाद की संपूर्ण संस्कृति हिंसा पर आधारित थी। प्रशासन एवं आंतरिक सुरक्षा दंड शक्ति पर आधारित थी। उत्पादन प्रणाली प्रतिस्पर्द्धा पर आधारित थी और पूंजीवादी बाज़ार के विस्तार में भी युद्ध एवं संघर्ष का सहारा लिया जाता था। इस क्रम में साम्राज्यवादी शक्तियों के द्वारा अत्याधुनिक हथियारों के समक्ष गांधीवाद सबसे खतरनाक हथियार सिद्ध हुआ, क्योंकि साम्राज्यवादी शक्ति के पास उसकी कोई काट नहीं थी। इसे निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है-

- गांधीजी के अहिंसा एवं सत्याग्रह के विचार ने सभी वर्गों, जैसे- किसान, ज़मींदार, व्यापारी, बच्चों एवं महिलाओं आदि को आकर्षित किया और राष्ट्रीय आंदोलन को मज़बूत किया। इस प्रकार, गांधीजी ने इसके माध्यम से एक वैकल्पिक राजनीति की शुरुआत की। गांधीजी की यह पद्धति ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध सबसे खतरनाक हथियार सिद्ध हुई।

- इन्होंने व्यक्तिवाद से बढ़कर वर्ग समन्वय पर बल दिया, ताकि जनशक्ति को बढ़ाया जा सके।
- गांधीजी की स्वराज की अवधारणा भी विलक्षण थी। उन्होंने इसके माध्यम से नैतिक स्वतंत्रता पर बल दिया। उन्होंने 1909 में लिखित 'हिन्द स्वराज' नामक पुस्तक में 'स्वराज' शब्द को स्पष्ट करने का प्रयास किया।
- गांधीजी ने पश्चिम की उपभोक्तावादी संस्कृति की खुलकर आलोचना की और पश्चिम के विपरीत ग्राम स्वराज पर बल दिया तथा विकेंद्रीकृत प्रशासन का मॉडल प्रस्तुत किया।
- इन्होंने रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम के माध्यम से लाखों गाँवों को कॉन्ग्रेस की राजनीति से जोड़ा।
- सबसे बढ़कर गांधीवाद ने दुनिया के शोषित एवं वंचित लोगों को साम्राज्यवादी शक्ति के विरुद्ध लड़ने के लिये अहिंसा एवं सत्याग्रह के रूप में एक कारगर हथियार दिया, उदाहरणस्वरूप- USA के अश्वेत नेता मर्टिन लूथर किंग, दक्षिण अफ्रीका के नेता नेल्सन मंडेला आदि ने गांधीवादी तरीके को अपनाया।

इस प्रकार गांधीवादी विचारधारा, ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ सबसे खतरनाक हथियार सिद्ध हुई।

## भारत शासन अधिनियम, 1935

- गोलमेज सम्मेलन के पश्चात् सरकार द्वारा 1935 ई. का एक्ट लाया गया। कुछ प्रारंभिक आलोचनाओं के बावजूद कांग्रेस ने इसे स्वीकार कर लिया।

❖ **प्रमुख प्रावधान :-**

- ब्रिटिश भारत और देशी रियासतों को मिलाकर एक संघ का निर्माण किया जाना था, परंतु उसके लिये शर्त यह रखी गई कि कम-से-कम आधे राज्यों की स्वीकृति हो। चूँकि, यह स्वीकृति नहीं मिली, इसलिये व्यवहार में यह संघ अस्तित्व में नहीं आया।
- प्रांतों में द्वैध शासन को समाप्त कर प्रांतीय स्वायत्तता लागू की गई अर्थात् प्रांतों में उत्तरदायी सरकार की स्थापना की जानी थी। परंतु इस अधिनियम के अनुच्छेद-93 के अधीन गवर्नर को अत्यधिक विवेकाधीन शक्तियाँ दी गई थीं।

- मताधिकार का विस्तार हुआ। धनी एवं मझोले किसानों को मताधिकार मिला। यहाँ ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य किसानों को अपनी ओर खींचकर कांग्रेस का जनाधार कमजोर करना था।
- इस अधिनियम के आधार पर बर्मा को भारत से पृथक् कर दिया गया।
- एक संघीय न्यायालय तथा रिजर्व बैंक की स्थापना का प्रावधान किया गया।

## ❑ कॉन्ग्रेस सरकारों के 28 महीने एवं उसकी उपलब्धियाँ

- 1935 का भारत शासन अधिनियम कई बातों में कांग्रेस के लिए निराशाजनक था। उदाहरण के लिए, इस अधिनियम में डोमिनियन स्टेटस तथा वयस्क मताधिकार का कोई प्रावधान नहीं था। संघीय व्यवस्था भी कांग्रेस की प्रगति को रोकने की एक साजिश थी। इसलिए आरंभ में कांग्रेस ने इसकी आलोचना की, किंतु फिर भी इसने चुनाव लड़ने का निर्णय लिया।
- 1937 के चुनाव में कांग्रेस को व्यापक सफलता मिली। कुल 11 प्रातों में से 5 प्रांतों में कांग्रेस को स्पष्ट बहुमत मिला तथा कांग्रेस 7 प्रांतों में सरकार बनाने की स्थिति में थी। ये प्रांत थे-बिहार, मध्य प्रांत, संयुक्त प्रांत, उत्तर-पश्चिम सीमा प्रांत, मद्रास, बॉम्बे तथा उड़ीसा। आगे कांग्रेसी प्रांतों की संख्या बढ़कर 8 हो गई। इन प्रांतों में कांग्रेसी मंत्रिमंडल ने अपना पदभार सभाला। किंतु तभी कांग्रेस के अंतर्गत वामपंथी तथा दक्षिणपंथी गुट के बीच सरकार बनाने के मुद्दे पर विवाद आरंभ हो गया।

- कांग्रेस के अंतर्गत वामपंथी गुट का यह कहना था कि कांग्रेस को चुनाव के माध्यम से अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना चाहिए, किंतु उसे सरकार में शामिल नहीं होना चाहिए क्योंकि गवर्नर के हस्तक्षेप के कारण सरकार पंगु हो जायेगी और फिर भारतीय जनता के बीच सरकार की बदनामी होगी, किंतु दक्षिणपंथी गुट चुनाव लड़ने के साथ सरकार में शामिल होने के लिए भी तत्पर था। अंत में, गाँधी जी की मध्यस्थता एवं वायसराय के आश्वासन पर कि गवर्नर अनावश्यक हस्तक्षेप नहीं करेगा, कांग्रेस के द्वारा प्रांतीय सरकारें स्थापित की गईं।
- बंगाल में कृषक प्रजा पार्टी के फजलुल हक ने पहले कांग्रेस को गठबंधन सरकार बनाने का प्रस्ताव दिया, परंतु कांग्रेस के इंकार करने पर मुस्लिम लीग के साथ मिलकर सरकार बना ली।
- कांग्रेस ने अपने शासन के 28 माह में अपने घोषणापत्र में किए गए वायदे को निभाने का प्रयत्न किया। कांग्रेस अध्यक्ष सुभाष चंद्र बोस ने 1938 में राष्ट्रीय योजना समिति नियुक्त की थी। इसके माध्यम से कांग्रेस की सरकारों ने योजना के विकास में हाथ बंटाने के प्रयास किए।

- जेल से राजनीतिक कैदियों की रिहाई, प्रांतों में किसानों की सुरक्षा के लिए रैय्यतवाड़ी कानून बनाना, प्रेस की आजादी के संरक्षण को लागू किया गया। शिक्षा के विकास के लिए वर्धा बेसिक शिक्षा योजना लायी गई जिसे मुस्लिम लीग एवं हिंदू महासभा ने अस्वीकार कर दिया।

## ❑ कांग्रेस की सरकारों का त्यागपत्र

- सितम्बर, 1939 में द्वितीय विश्व युद्ध आरंभ होने के पश्चात् ब्रिटिश सरकार ने भारतीय दलों के साथ विचार-विमर्श किये बिना भारत को एक 'युद्धरत राष्ट्र' घोषित कर दिया। अतः कांग्रेस द्वारा इसका व्यापक विरोध आरंभ हुआ। गाँधी ने यह स्पष्ट कर दिया कि प्रथम विश्व युद्ध की तरह इस बार भारतीय जनता ब्रिटिश सरकार को बिना शर्त समर्थन नहीं देगी। गाँधी के नेतृत्व में कांग्रेस का यह कहना था कि सरकार को दो माँगें अविलंब पूरी करनी चाहिए। प्रथम, केंद्र में उत्तरदायी सरकार जैसा कोई प्रावधान हो। दूसरे, युद्ध के शीघ्र बाद भारतीयों के द्वारा निर्मित एक संविधान सभा का प्रावधान हो।

- चूँकि सरकार ने इस पर कोई स्पष्ट आश्वासन नहीं दिया। अतः नवम्बर, 1939 तक कांग्रेस की प्रांतीय सरकारों ने त्यागपत्र दे दिया। फिर कांग्रेस तथा सरकार के बीच विवाद आरंभ हो गया।
- जिस दिन कांग्रेसी सरकार ने त्यागपत्र दिया था, उस दिन को मुस्लिम लीग ने 'मुक्ति दिवस' के रूप में मनाया। मुस्लिम लीग के साथ अम्बेडकर और उनकी पार्टी ने भी मुक्ति दिवस मनाने में सहयोग दिया।

# भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में समाजवाद एवं वामपंथ का बढ़ता हुआ प्रभाव

- 1920 तथा 1930 के दशक में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन पर एक शक्तिशाली वामपंथी प्रभाव महसूस किया गया। इस प्रभाव से राष्ट्रीय आन्दोलन के चरित्र में ही परिवर्तन हो गया। अब तक कांग्रेस का मुख्य लक्ष्य जहाँ राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करना था, वहीं अब सामाजिक तथा आर्थिक स्वतंत्रता की माँग भी की जाने लगी।

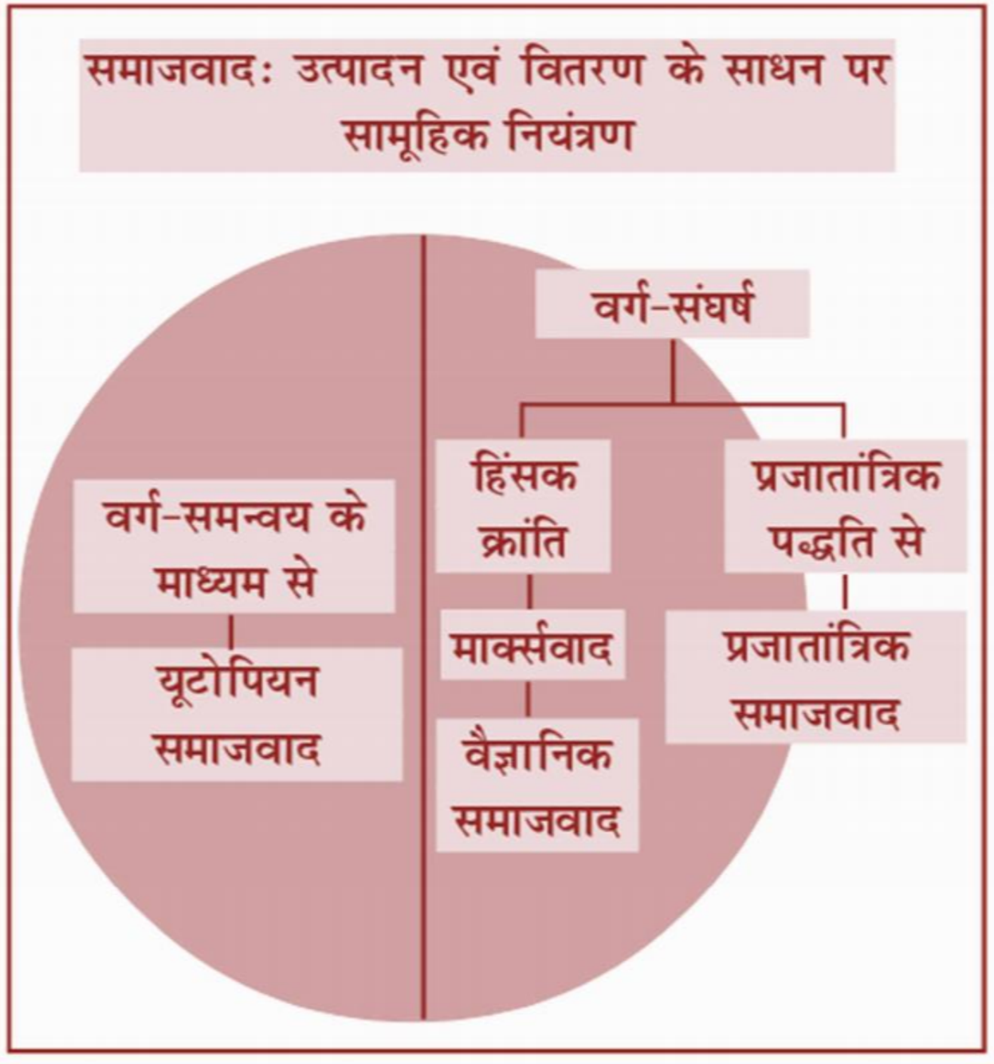

❖ **निम्नलिखित कारणों से समाजवाद को प्रेरणा मिली–**

1. भारत में वामपंथी विचार के उद्‌भव एवं प्रसार के पीछे मुख्य प्रेरक शक्ति 1917 की रूसी क्रान्ति को माना जाता है। 7 नवम्बर, 1917 को लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविक पार्टी ने जार के निरंकुश शासक को उखाड़ फेंका तथा रूस में विश्व के पहले समाजवादी राज्य की स्थापना की घोषणा की। रूस द्वारा शासन व्यवस्था में सर्वहारा को महत्त्वपूर्ण स्थान देने से उपनिवेशों की शोषित जनता में यह विचारधारा काफी लोकप्रिय हुई।
2. असहयोग आन्दोलन को अपेक्षित सफलता नहीं मिलने से निराश युवा वर्ग को मार्क्सवाद एक वैकल्पिक एवं तीव्र स्वतंत्रतागामी मार्ग लगा। इसके अतिरिक्त, युवाओं का एक वर्ग गाँधीवादी समाधान से संतुष्ट नहीं था।
3. 1929–30 की विश्व आर्थिक मंदी ने भी पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की कमजोरी को उद्‌घाटित कर दिया। इस विश्वव्यापी मंदी से जिस प्रकार सोवियत रूस ने स्वयं को बचाए रखा, इससे भी साम्यवादी विचारधारा को लोकप्रियता मिली।

## ❑ भारतीय राजनीति में समाजवादी एवं वामपंथी आंदोलन

❖ **कम्युनिस्ट आंदोलन :** सर्वप्रथम एम. एन. राय ने 1920 ई. में ताशकंद में 'भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी' की स्थापना की थी, किन्तु भारत में औपचारिक रूप से कम्युनिस्ट आंदोलन की शुरूआत 1925 में कानपुर से हुई जब एम. सिंगारवेलु की अध्यक्षता में कम्युनिस्ट पार्टी की अखिल भारतीय बैठक हुई। इसमें श्रीपद अमृत डांगे, नेली सेनगुप्त, मुजफ्फर अहमद, शौकत उस्मानी आदि शामिल हुए।

- कम्युनिस्ट पार्टी ने कांग्रेस के साथ मिलकर काम करने का निर्णय लिया। उसका उद्देश्य था कांग्रेस की नीति को वामपंथ की दिशा में मोड़ना। कम्युनिस्टों के द्वारा श्रमिक एवं किसान पार्टी का गठन किया गया। इस प्रकार कम्युनिस्ट पार्टी के द्वारा राष्ट्रीय आंदोलन में एक नए वामपंथी रूझान को प्रोत्साहन दिया गया।

❖ **कांग्रेस समाजवादी दल ( CSP ) :** 1933 में कांग्रेस के कुछ नेताओं ने नासिक जेल में एक कांग्रेस समाजवादी पार्टी गठित करने का निर्णय लिया। यह पार्टी कांग्रेस के अन्तर्गत ही कार्य करती। फिर 1934 में कांग्रेस समाजवादी पार्टी का गठन हुआ। इसके कुछ महत्वपूर्ण नेता आचार्य नरेन्द्र देव, जयप्रकाश नारायण, अन्नपूर्णा नंद सिंह, मीनू मसानी, अशोक मेहता आदि थे। जवाहरलाल नेहरू ने इस पार्टी को आशीर्वाद जरूर दिया, लेकिन वे इसके सदस्य नहीं बने।

- इस पार्टी का लक्ष्य था संगठन एवं विचारधारा के स्तर पर कांग्रेस को समाजवाद की ओर मोड़ना। विचारधारा के स्तर पर कांग्रेस को रूपांतरित करने का अर्थ था- कांग्रेस जनों को धीरे-धीरे इस बात के लिए राजी करना कि वे स्वतंत्र भारत की प्राप्ति के लिए समाजवादी दृष्टिकोण अपनाएं तथा वर्तमान आर्थिक मुद्दों पर अपना रूख किसानों और मजदूरों के पक्ष में रखें। संगठन के स्तर पर रूपांतरण का अर्थ था- ऊपर से नेतृत्व का परिवर्तन क्योंकि इस पार्टी के नेता मानते थे कि वर्तमान नेतृत्व जनता के संघर्ष को चरम तक ले जाने में अक्षम है।

## ❖ कांग्रेस पर समाजवादी विचारधारा से प्रेरित युवा नेताओं का प्रभाव :-

- कांग्रेस पर जवाहरलाल नेहरू तथा सुभाष चन्द्र बोस जैसे युवा नेताओं का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। इनके द्वारा विभिन्न अधिवेशनों की अध्यक्षता की गई और उनमें सर्वाधिक कार्यक्रम बनाये गये। जवाहरलाल नेहरू ने 1929 के लाहौर अधिवेशन, 1936 के लखनऊ अधिवेशन और 1937 के फैजपुर अधिवेशन की अध्यक्षता की। 1929 के लाहौर अधिवेशन में उन्होंने घोषित किया कि 'मैं समाजवादी हूँ'। फिर 1936 के लखनऊ अधिवेशन में उन्होंने यह स्पष्ट किया कि "मैं मानता हूँ कि भारत और विश्व की समस्या का एक मात्र हल समाजवाद है"।
- फिर 1938 तथा 1939 में सुभाष चंद्र बोस ने क्रमशः हरिपुरा तथा त्रिपुरी अधिवेशन की अध्यक्षता की। यद्यपि त्रिपुरी अधिवेशन ने संकट का रूप ले लिया क्योंकि इस अधिवेशन के मध्य कांग्रेस के वामपंथी तथा दक्षिणपंथी गुटों के बीच संघर्ष छिड़ गया। दक्षिणपंथी खेमे के विरोध के बावजूद भी सुभाष के द्वारा चुनाव जीतना, वामपंथी विचारों की प्रगति को दर्शाता है।

## ❖ समाजवाद अथवा वामपंथ का योगदान :-

1. इसके प्रभाव से किसानों तथा मजदूरों की समस्या को प्रभावी ढंग से उभारा गया। इसने किसानों और श्रमिकों को संगठित किया तथा राजनीति में उनकी भागीदारी को प्रोत्साहन दिया।
2. इसने स्वतंत्रता की परिभाषा बदल दी तथा राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ-साथ आर्थिक एवं सामाजिक स्वतंत्रता पर भी बल दिया।
3. इसने कांग्रेस के कार्यक्रम को भी समाजवाद की दिशा दे दी। उदाहरण के लिए, 1931 का कराची अधिवेशन (20 सूत्री समाजवादी कार्यक्रम)। कराची प्रस्ताव में श्रमिकों के लिए सामान्य कार्यक्रम; जैसे- अधिक पारिश्रमिक, बंधुआ मजदूरी की समाप्ति एवं ट्रेड यूनियन बनाने के अधिकार आदि को शामिल किया गया था।

4. 1936 के लखनऊ अधिवेशन एवं 1937 के फैजपुर अधिवेशन में किसानों की दशा में सुधार के लिए प्रगतिशील कृषि कार्यक्रम लाए गए। 1938 के हरिपुरा अधिवेशन में 'योजना समिति' का गठन हुआ, इसका अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू को बनाया गया।

5. महिलाओं के अधिकारों की रक्षा तथा राजनीति में धर्मनिरपेक्षता की बात लाना कम्युनिस्टों की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक थी।

❖ सीमाएँ :-

1. भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं ने चीन के कम्युनिस्ट नेताओं की तरह व्यावहारिक दृष्टिकोण नहीं अपनाया अर्थात् उन्होंने भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल रणनीति नहीं अपनायी, बल्कि हमेशा मॉस्को एवं लंदन से ही निर्देशित होते रहे।
2. कांग्रेस समाजवादी दल ने अपना पहला लक्ष्य राष्ट्रवाद को बनाया और फिर समाजवाद को।
3. संकट के समय भी विभिन्न समाजवादी संगठन संयुक्त मोर्चा बनाने में विफल रहे। उदाहरण के लिए, त्रिपुरी संकट। इस संकट के समय न केवल कांग्रेस समाजवादी दल एवं नेहरू ने सुभाष का साथ छोड़ दिया था, वरन् समाजवादी दल ने भी सुभाष को किनारे कर दिया था।
4. जब तक भारत में कम्युनिस्ट आंदोलन आरंभ हुआ, तब तक गांधीजी के नेतृत्व में एक सशक्त बुर्जुआ आंदोलन स्थापित हो चुका था। अतः भारत में कम्युनिस्टों के लिये गांधीवाद भी एक बड़ी चुनौती बना रहा।

## ❑ महिलाओं में जागृति

- डॉ. सरोजिनी नायडू एवं श्रीमती एनी बेसेंट के प्रयास से महिला मताधिकार के मुद्दे को प्रोत्साहन मिला था।
- प्रांतीय विधान मण्डलों के चुनाव में महिलाओं को मताधिकार 1930 तक मिल चुका था। फिर 1935 में केन्द्रीय विधान मण्डल में महिलाओं को मताधिकार मिला तथा उनके लिए सीटें भी आरक्षित की गईं।

## ❑ किसानों में जागृति

- 1920 के दशक में प्रांतीय किसान सभा की स्थापना की गई। फिर 1930 के दशक में सहजानंद सरस्वती के नेतृत्व में अखिल भारतीय किसान सभा का गठन हुआ।
- 1937-38 में बिहार के बरहिया ताल में कार्यानंद शर्मा के नेतृत्व में बकाश्त आंदोलन हुआ।

## सम्प्रदायवाद की प्रगति

❖ **1930 के दशक में मुस्लिम जमींदारों को समाजवाद का भय :-** 1930 के दशक में मुस्लिम जमींदार वर्ग बढ़ते हुए समाजवाद के खतरे से भयभीत थे। उन्हें डर था कि कहीं समाज आर्थिक आधार पर न बँट जाये, इसलिए उन्होंने साम्प्रदायिक विभाजन को प्रोत्साहन दिया।

❖ **1937 में चुनावी परिणामों का सम्प्रदायवाद पर प्रभाव :-**

1. 1932 ई. के साम्प्रदायिक पंचाट में मुस्लिम लीग की लगभग सभी माँगें मान ली गईं। अब उनके पास कोई मुद्दा नहीं रह गया था। अत: 1937 के चुनाव में मुस्लिम लीग की हार हुई। इस हार के पश्चात् मुहम्मद अली जिन्ना ने सबक सीखा। फिर जिन्ना ने मुस्लिम लीग को जन सामान्य पार्टी बनाने के लिए नई नीति और नये कार्यक्रमों को अपनाया।

2. दूसरी तरफ, हिन्दू महासभा को भी चुनावी विफलता का सामना करना पड़ा। अतः हिन्दू महासभा के अध्यक्ष मदन मोहन मालवीय ने स्वास्थ्य के आधार पर त्याग पत्र दे दिया, फिर 1938 ई. में नये अध्यक्ष वी.डी. सावरकर बने। उसी तरह, डॉ. हेडगेवार की मृत्यु के बाद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नये अध्यक्ष गोलवलकर बने। इस प्रकार उग्र सम्प्रदायवाद का चरण अर्थात् जिन्ना, सावरकर और गोलवलकर का चरण प्रारंभ हुआ।

समाप्त